जगद्गुरु श्रीत्रिदण्डिग्रन्थमाला का ३१वां पुष्प

श्रीसीतारामाभ्यां नमः

आञ्जनेय चिन्तन

: लेखक :

विद्यावाचस्पति, महामहोपाध्याय-डा० उमारमणझा

एम. ए. न्यायाचार्य, पी.एच.डी. डी. लिट्

उपाचार्य तथा दर्शन विभागाध्यक्ष

श्रीरणवीर केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ, शास्त्रीनगर जम्मूतवी

सम्पादक
स्वामी रामेश्वरानन्दाचार्य
आचार्यपीठ श्रीकोसलेन्द्रमठ, अहमदाबाद ३८०००७

सहसम्पादक-शास्त्री श्रीशरच्चन्द्र राज्यगुरु वेदान्तव्याकरणाचार्य
डा० बाबू राम शर्मा एम. ए. पी.एच. डी.

व्यवस्थापक
स्वामी हरिप्रसादाचार्य

सर्वाधिकारसुरक्षित

प्रकाशक
जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यपीठ श्रीकोसलेन्द्रमठ पो० पालडी
अहमदाबाद ३८०००७
श्रीरामानन्दाब्द-६८६ विक्रमाब्द २०४३ श्रीरामनवमी १९८६

❀ भूमिका ❀

गणपतिमभिवन्द्यं सर्वदानन्दकन्दम्
कनकरुचिररूपं वक्रतुण्डं विचित्रम् ।
धवलकुसुमहारं शोभमानं गजेन्द्रम्
निखिलकलिमलघ्नं हासमानं नमामि ॥१॥

नगपतिपतिपुत्रो¹ मित्रपुत्रान् कलत्रम्
अवतु भुवि सनाथो दानवारिः प्रसन्नः ।
धनजनसुखपूर्णान् यः क्षमो नः प्रकर्तुं
स भवतु भवभूत्यै भूरिशो भालचन्द्रः ॥२॥

यतोऽज्ञाननाशो विकासो नराणाम्
सुखं चार्थसिद्धिर्ध्रुवं भूति-लाभः ।
भवन्ति प्रतापः प्रकीर्ति-प्रपूर्तिः
नतोऽहं गणेशं प्रभुं तं प्रसन्नम् ॥३॥

ससीतं राघवं नत्वा रामानन्दं जगद्गुरुम् ।
मारुतेश्चिन्तनं किञ्चित्क्रियतेऽत्र यथामति ॥४॥

वन्दे प्रतापनिलयं कनकाचलाभम्,
साक्षात्कृतान्तमशिवं समरेऽसुराणाम् ।
वातात्मजं परमसुन्दरमाञ्जनेयम्,
श्रीरामभक्तमतुलं नकुलाय तेजः ॥५॥

परमब्रह्म भगवान् श्रीराम के अनन्य भक्त श्रीहनुमान्‌जी की चर्चा वैदिक साहित्य, रामायण, महाभरत, पुराण तथा विभिन्न साहित्य ग्रन्थों में मिलती है। वस्तुतः आदि कवि वाल्मीकि ने जो पवनपुत्र आञ्जनेय के स्वरूप पर प्रकाश डाला है, वह अद्वितीय है।

---

(१) नगपतेः कैलासस्य पतिः शंङ्करः तस्य पुत्रः ।

बहुत दिनों से भक्त श्रीहनुमान् के विषय में लिखने की इच्छा चली आ रही थी, और उनके विषय में मैंने कुछ हस्त-लिखित ग्रन्थों से कुछ स्तोत्रों का भी संग्रह कर लिया फिर श्रीहनुमान्जी के विभिन्न स्वरूपों पर भी विचार किया। भक्तराज हनुमान्, वीर हनुमान् सेवक हनुमान्, ज्ञानी हनुमान् के रूप में उनके स्वरूपों पर पौराणिक ग्रन्थों के आधार पर विचार किया गया है।

इस ग्रन्थ में श्रीराम–भक्त हनुमान् के विवेचन से पूर्व पर ब्रह्म श्रीराम के विषय में भी थोड़ा सा प्रकाश डाला गया है। उसके बाद आञ्जनेय के कुछ स्तोत्र तथा उनके पूजाविधान के विषय में भी यथोचित विचार यहाँ व्यक्त कर दिया गये है।

इस ग्रन्थ को लिखने का लक्ष्य मात्र भक्तजनों की संतुष्टि ही है अगर इस पुस्तक को पढ़ने से सुधीजन तथा अन्य सहृदय भी प्रसन्न होंगें तो मेरा श्रम और भी सफल माना जायगा।

परमपूज्य प्रातः स्मरणीय योगिराट् श्रीसम्भारिबाबा को सादर प्रणाम करके भक्तों के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ। क्योंकि उनके ही सहयोग एवं उचित उत्साहवर्धक वाक्यों से इस कार्य को करने में मैं समर्थ होसका।

इस ग्रन्थ में मैं अपने सभी शोधच्छात्रों छात्रों तथा शिशुजनों को आशीर्वाद ही देता हूँ तथा श्रीहनुमान्जी से प्रार्थना कराक हूँ कि वे उनकी सतत रक्षा करें।

इस ग्रन्थ के प्रकाशन के लिए जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य पीठ श्रीकोशलेन्द्रमठ अहमदाबाद तथा विश्रामद्वारिकास्थ श्री शेषमठपोरबन्दरके आचार्य स्वामीरामेश्वरानन्दाचार्यजीका मैं आभारी हूँ। सर्वेश्वर श्रीरामउन्हे चिरायुएवं यशस्वी रक्खें।

जम्बूतवी विदुषाँ वशंवदः

३०।११।१९८५ उमारमण झा

❁ परब्रह्म श्रीराम ❁

तमीश्वराणां परमं महेश्वरं तं देवतानां परमं च दैवतम् ।
पतिं पतीनां परमं परस्तात् विदाम रामं भुवनेशमीड्यम् ॥

वस्तुतः श्वेताश्वतर उपनिषद् का यह स्तोत्र मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र के लिए सहि लगता है । योगीलोग भी उसी राम में लीन होना चाहते हैं । "रमन्ते योगिनोऽस्मिन् इति रामः" ऐसा कहकर योगीयों के लिए भी आराध्य देव श्री रामचन्द्र ही हैं ।

श्रीमद्भागवत के अनुसार-

वदन्ति तत्तत्त्वविदस्तत्त्वं यद्ज्ञानमद्वयम् ।
ब्रह्मेति परमात्मेति भगवानिति शब्द्यते ॥ (भाग १-२-१२)

अतएव भगवान् श्री रामही ब्रह्म और परमात्मा हैं । उनकी ही शक्ती से इस ब्रह्माण्ड के चराचर वस्तुओं में सञ्चार होता है ।

शास्त्र में भगवान् का लक्षण इस प्रकार है—

उत्पत्तिं च विनाशं च भूतानामगतिं गतिम् ।
वेत्ति विद्यामविद्यां च स वाच्यो भगवानिति ॥

अर्थात् जो सम्पूर्ण प्राणीयों की उत्पत्ति, विनाश, विद्या-अविद्या तथा गमनागमन को सहि रूप से जानता है वहि भगवान् हैं ।

अर्थात् भगवान् सर्वव्यापी तथा सर्वशक्तिमान् हैं। किन्तु अधिकारी के भेद से उपासन की दृढता के लिए (१) निर्गुण निराकार सच्चिदानन्दस्वरूप (२) सगुणनिराकार (३) सगुण-साकार और (४) सगुण-साकार लीलाविग्रहावतार ये चार भगवान् के भेद किये गये हैं । "सर्वेषामवताराणामवतारीरघूत्तमः" इस आगम वचनुसार सर्वावतारी सर्वेश्वर श्रीरामचन्द्रजी ही हैं तथा साधारण जन

उपासना सौलभ्य के लिये चौथे भेद के अन्तर्गत सगुण साकार लीलाविग्रहावतार मार्यादापुरुपोत्तम श्रीरामचन्द्रजी हैं।

मर्त्यलोक में अधर्म को हटाकर धर्म की स्थापना के लिए सगुण साकार लीलाविग्रह श्री राम कृष्णादिका स्वरूप है। भगवान् श्रीरामचन्द्रजी भी धर्मव्यवस्थार्थ और प्राणियों के उद्धार के लिए अवतरित हुए। इसलिए जगद्गुरु श्रीतुलसीदासजी ने लिखा है—

केवट निसिचर विहगमृग किए साधु समानि।
तुलसी रघुवर की कृपा सकल सुमंगल खानि॥
(दोहावली–२२८)

अर्थात भगवान् श्रीराम की कृपा सुमंगलों की खान है। उस श्री रामकृपा ने केवट राक्षस (विभीषण), पक्षी (जटायु) और पशुओ बन्दर भालुओं को भी सम्मान देकर साधु बनादिया

परब्रह्म स्वरूप भगवत्तत्त्व यद्यपि एक ही है लेकिन लोग उन्हें अलग अलग देखते हैं। इसलिए भगवान् ने ठीक ही कहा है—

"ये यथा मां प्रपद्यन्ते तां तथैव भजाम्यहम।"

अर्थात् मुझे जो जिस रूप में भजता है उसे मैं उसी रूप में मिल्ता हूँ। ज. गु. श्रीतुलसीदासजी ने भी श्रीकृष्ण को देखकर कहा था—

"तुलसी मस्तक तब झुके धनुषबाण लियो हाथ।"

अर्थात् श्रीतुलसीदासजी श्रीरामजी के रूप में भगवान् को देखना चाहते थे। और उसी समय मुरलीधर श्रीकृष्ण धनुधारी श्रीराम बनकर उनके सामने प्रकट हो गये। इसका कारण उस देवता की महाशक्ति है। वस्तुतः परमात्मा के पुरुषवाचक सभी स्वरूप इन्हीं अनादि अनिर्वचनीया सर्वशक्तिमयी. परमेश्वरी आद्या महाशक्ति के परिणाम हैं।

जब तक महाशक्ति अपनी माया शक्ति को अपने भीतर छिपाये रखती है, उससे कोई क्रिया नहीं करती, तबतक वह निष्क्रिय शुद्ध ब्रह्म है। यहीं महाशक्ति जब उसे विकासोन्मुख करके एक से अनेक होने का संकल्प करती है तब स्वयं ही पुरुषरूप में मानो अपनी ही प्रकृतिरूपयोनि में संकल्प के द्वारा चेतनरूप बीज स्थापन करके सगुण बन जाती है। यही महा· शक्ति विश्वरूप विराट् शक्ति बन जाती है। इस सृष्टि निर्माण में स्थूल निर्माता प्रजापति के रूप में आप ही अंशावतार के भाव से सृष्टिकर्ता ब्रह्मा, पालनकर्ता विष्णु और संहारकर्ता रुद्र का रूप धारण करती है। यों—

"श्रीरामसान्निध्यवशाज्जदानन्ददायिनी।
उत्पत्तिस्थितिसंहारकारिणी सर्वदेहिनाम्।
सा सीता भवति ज्ञेया मूल प्रकृतिसंज्ञिता॥
प्रणवत्वात् प्रकृतिरितिवदन्ति ब्रह्मवादिनः॥"

यह अथर्वणश्रुति तथा—

"जासु अंश उपजहिं गुनखानी। अगनित लच्छि उमा ब्रह्मानी। भ्रूकुटि विलास जासु जग होई। राम बामदिशि सीता सोई॥" आदि मानस के तत्त्वानुसन्धान करने पर "सींता तत्त्वमुपास्महे" ही सर्वाधार भूताशक्ति स्थिर होती है ये ब्रह्मा विष्णु और शिव प्रभृति अंशावतार भी किसी कल्प में दुर्गा रूपसे, किसी कल्प में श्रीराम के रूप से. और किसी कल्प में श्रीकृष्णादि रूपसे अवतरित होते हैं। एक ही शक्ति विभिन्न नामरूपों से सृष्टि रचना करती है।

शक्ति और शक्तिमान् में अभिन्नता है। महाशक्ति ही सभी प्राणियों में गति सञ्चार करती है। महाशक्ति ही सभी कारणों के कारण है। सृष्टि पालन और संहारकारिणी महाशक्ति ही है।

"उद्भवस्थिति संहारकारिणी क्लेशहारिणीम् ।
सर्वश्रेयस्करींसीतां नतोऽहंरामवल्लभाम् ॥"
मानस का यह महा वाक्य सर्व विदित ही है ।

परब्रह्म-शक्तिमान् भगवान् के असंख्य अवतार हो चुके हैं जिनमें २४ अवतार प्रसिद्ध हैं। मत्स्य, कच्छप, वराह, वामन, नृसिंह, परशुराम. राम, बलराम-कृष्ण बुद्ध तथा कल्कि ये दश उन अवतारों में अत्यन्त प्रसिद्ध हैं ।

मत्स्यावतार में भगवान् ने वैवस्वत मनु सत्यव्रत की रक्षा की थी और नवीन सृष्टि के बीजों का आरम्भ किया था ।

समुद्रमन्थन के समय कूर्मावतार हुआ था। वराह अवतार में वेदों की रक्षा कर हिरण्याक्ष का भगवान् ने दमन किया । नृसिंहावतार में प्रल्हाद की रक्षा की और हिरण्यकशिपु का वध किया था । परशुरामावतार में अज्ञानरूप दंभ आदि के प्रतीक सहस्रार्जुन प्रभृति क्षत्रियों का नाश हुका था ।

श्रीरामावतारमें भगवान् ने रावणादि असुरों का वध किया था। भगवान् राम समस्त दैवी गुणों के आश्रय कहे गये हैं । वे अनन्त गुणगणनिलय हैं ।

"ज्ञानशक्तिबलैश्वर्यवीर्यतेजांसिषड्गुणाः ।
भगत्वेनेरिताः सन्ति श्रीरामे भगवान् स तत् ॥
श्रीरामे भगवच्छब्दोमुख्यवृत्त्या प्रवर्तते ।
गौण एव स चान्यत्र षड्विधैश्वर्यलेशतः ॥"

इत्यादिरूप से श्रीरामतत्त्व का निरूपण जगद्गुरु श्रीगङ्गाधराचार्यजी ने किया है ।

वही परमात्मातत्त्व जब शीलशक्ति-सौन्दर्य विमण्डित हो कर ऐश्वर्यादि षड्गुणविशिष्टता के द्वारा सर्वजन सुलभ नामरूप को धारण कर लेता है तब भगवान् इस शब्द का वाचक बन

जाता है (विष्णुपु. ६.५.७४) फिर तो भगवान् श्रीरामकी पूर्व कथित "सोइ सच्चिदानन्द घन रामा" इससे सर्वावतारित्व प्रस्फुट ही है। और श्रीकृष्ण की भी सत्यं ज्ञानमनन्तं यद् ब्रह्मज्योतिः सनातनम् से भगवत् तत्त्व से अभिन्नता सहज ही बोधित होने लगती है। गीता में अर्जुन ने भी वास्तविक बोध होजाने पर उस तत्त्व से अभिन्न श्री कृष्ण के लिए कहा है—

परं ब्रह्म परं धाम पवित्रं परमं भवान् ।
पुरुषं शाश्वतं दिव्यमादिदेवमजं विभुम् ॥
आहुस्त्वामृषयः सर्वे देवर्षिनारदस्तथा ।
असितो देवलोव्यासः स्वयं चैव ब्रवीषि मे ॥

भागवत के प्रथम स्कन्ध में ही स्पष्ट कर दिया गया है कि 'तत्त्व (ज्ञान) ब्रह्म परमात्मा और भगवान् पर्याय है। (श्री मद्भा. १.२.११) इस प्रकार "घटघट व्यापक राम" और "सर्वं ब्रह्ममयं जगत्" एवं "निज प्रभुमय देखहि जगत" कहा है। गोस्वामी श्री तुलसीदासजी ने श्रीराम को ही परब्रह्म मान कर लिखा है—

व्यापक एक ब्रह्म अविनासी । सत चेतन घन आनन्द रासी ॥
आदि अन्त कोउ जासु न पावा। मति अनुमान निगम जस गावा॥
बिनु पद चलै सुनै बिनु काना। कर बिनु कर्म करै विधि नाना॥
आनन रहित सकल रस भोगी। बिनु बानी वक्ता बड़ जोगी ॥
तनु बिनु परस नयन बिनु देखा। ग्रहै घ्राण बिनु बास अशेषा ॥
अस सब भांति अलौकिक करनी। महिमा तासु जाइ किमि बरनी॥

वेही परब्रह्म रूप राम अपने स्वरूप के परिचायक ६ गुणों से युक्त होकर भगवान् के रूप में प्रकट हुए थे-

ज्ञान शक्ति बलैश्वर्यवीर्यतेजांस्यशेषतः ।
भगवच्छब्दवाच्यानि विना हेयैर्गुणादिभिः ॥
(विष्णुपुराण ६.५.७९)

अर्थात् ज्ञान, शक्ति, बल, ऐश्वर्य, तेज और वीर्य ये ६ गुणों से युक्त ही भगवान् होते हैं। रामायण में "सीता लक्ष्मी-र्भवान् विष्णुः" कहा गया है। (रामा. ६.११७.२९) और भी रूपिणी यस्य पार्श्वस्था सीतेति प्रथिता जनैः। (हरिवंश. १४१। ११९) वही पुनः श्रीराधाकृष्ण भी हुए हैं—

सा तु साक्षान्महालक्ष्मी कृष्णो नारायणः प्रभुः।
नैतयोर्विद्यते भेदः स्वल्पोऽपि मुनिसत्तम ॥

अब हम श्रीरामचन्द्रजी में भगवत्तत्त्वकी समीक्षा करते हैं हमारा श्रीरामचरितमानस मर्यादा-पुरुषोत्तम भगवान् श्री रामचन्द्रजी की परब्रह्मता के साथ उनके आदर्श मानवीय चरित्रों का भी प्रतिपादन करता है। वस्तुतः अखिल ब्रह्माण्ड नायक के लिए मानवीयचरित्र का अभिनय एक विचित्र कार्य है।

श्रीराम के मानवचरित्र का मूलकारण महारानी शतरूपा का मिला हुआ वरदान है। इसमें भगवत्तत्त्व के रूप विधान का दर्शन मनु महाराज की तपस्या से करें। महाराज मनु प्रभु के ही समान पुत्र की कामना करते हैं-"चाहउ तुम्हहिं समान सुत" और महारानी शतरूपा ने कहा-नाथ ! चतुरनृप ने जो वर मांगा वह मुझे प्रिय है किन्तु आप ब्रह्म हैं। अतः इस रूप में आप मेरे पुत्र होंगे इसमें मुझे सन्देह है लेकिन आपने एवमस्तु कहकर वरदान दे दिया है। महारानी शतरूपा को कौशल्या रूप में ये ६ वरदान मिला है। उन्होंने मांगा भी था—

सोई सुख, सोइ गति, सोइ भगति, सोइ निज चरण सनेहु।
सोइ विवेक, सोइ रहनि प्रभु हमहि कृपा करि देहु।

(१) सोइ सुख-व्यापक ब्रह्म निरञ्जननिर्गुण विगत विनोद।
सो अज प्रेम भगति वस कौसल्या के गोद ॥

(२) सोइ गति ज्ञान-स्तुति करि न जाइ भय माना।
जगत पिता मैं सुत करि जाना ॥

निगम नेति सिव अंत न पावा
ताहि धरै जननी हठि धावा ॥

(३) सोइ भगति–सुख सन्दोह मोह पर ज्ञान गिरा गोतीत ।
दंपति परम प्रेम बस कर सिसु चरित पुनीत ॥

(४) सोइ निज चरणसनेहु–तन पुलकित मन वचन न आवा ।
नयन मूंदि चरननि सिर नावा ॥

(५) सोइ विवेक–बारबार कौसल्या विनय करइ कर जोरि ।
अब जनि कबहुँ व्यापे प्रभु मोहि माया तोरि ॥

(६) सोइ रहनि–एकबार जननी अन्हवाए ।
करि सिंगार पलना पौढाए ॥
निज कुल इष्टदेव भगवाना । पूजा हेतु कीन्ह अस्नाना ॥
करि पूजा नैवेद्य चढावा ॥

इस प्रकार शतरूपा के ६ वरदानों की प्राप्ति कराने में भगवत् तत्त्व का सर्वत्र प्रदर्शन होता है ।

एकबार कुल के इष्टदेव श्रीरंगजी को कौसल्याजी नैवेद्य रखकर पूजा करती है । जब वह उनके मन्दिर में जाती है तो वहाँ छोटा सा बालक रामको भोग पदार्थो को खाते हुए देखकर चकित हो जाती है कि पलना से अपने आप असमर्थ बालक कैसे मन्दिर आगया । जब दौड़कर वह पलने के पास आती है तो वहाँ–इहाँ उहाँ दुइ बालक देखा ।
मति भ्रम मोर कि आन विसेषा ॥

यहाँ भगवान् श्रीरामने "तुरीयमेव केवलम्" का ऐश्वर्य प्रकट किया है । यह कथमपि मानवचरित्र में संभव नहीं हो सकता है । विश्वामित्र के यज्ञ रक्षा के समय–"एकहि बान प्राण हरि लीन्हा" दीन जानि तेहि निज पद दीन्हा । यहाँ निज पद प्रदान करना ऐश्वर्य बोधक है । अपने चरणरज से अहल्या का उद्धार करना भी पराशक्ति का द्योतक है । जनकजी ने जब राम और लक्ष्मण के बिषय में पूछा–

ब्रह्म जो निगम नेति कही गावा। उभय वेष धरि की सोई आवा॥

इस पर विश्वामित्रजी कहते हैं—

कह मुनि विहँसि कहेउ नृप नीका। बचन तुम्हार न होई अलीका॥

भगवान् श्रीराम के विवाह में देवताओं के कपट भेष में आनेपर उनका मानसिक पूजन करना और आसन प्रदान करना भगवान् श्रीराम की भगवत्ता का प्रकाशन करना है—

"सुर लखे राम सुजान पूजे मानसिक आसन दिये।"

अरण्यकाण्ड में सुतीक्ष्ण शबरी गीध आदि के प्रकरणों में भी श्रीराम में भगवत् तत्त्व का प्रदर्शन होता है। गीध को श्रीरामजी ने कहा था—"राम कहा तनु राखहु ताता।"

"तनु तजि तात जाहुमम धामा।"

कहा है। किष्किन्धा में श्रीहनुमानजी के मिलने पर तथा वालि के शब्दों में सुस्पष्टतया भगवत् तत्त्व को देखते हैं—

"जन्म जन्म मुनि जतनु कराहीं। अंत राम कहि आवत नाहीं॥
जासु नाम बल शंकर कासी। देत सबहि सम गति अविनासी॥
सो नयन गोचर जासु गुन नित नेति अहि श्रुति गावहीं॥"

इसी प्रकार लङ्का में विभीषण मन्दोदरी, त्रिजटा, कुम्भकरण आदि के द्वारा भगवत्ता का प्रदर्शन हुआ है। रावणवध के बाद ब्रह्मादिक देवताओं के द्वारा स्तुति से भगवत् स्वरूप का स्पष्टीकरण होता है।

वेद के अनुसार सबों के मूल में एक अद्वितीय सर्वव्यापक, समर्थ परमात्मशक्ति की सत्ता है। वह निराकार होते हुए भी निर्गुण और सगुण दोनों हैं। उसी से जगत् की उत्पत्ति हुई है। वही सबका आधार और अधीश्वर है। उसके विराट् स्वरूप का वर्णन भी वेद में है। ये सब ज.गु. श्रीतुलसीदासजी

के श्रीराम में भी विद्यमान है। श्रीतुलसीदासजी श्रीरामजी को ब्रह्म मानते हैं (२।९३)

वस्तुतः परमात्मा सच्चिदानन्दस्वरूप, निर्गुण, अनादि, अनन्त. अक्षर, अकल, अनीह, निर्विकार, निरञ्जन, निरूपाधि, अगोचर और गुणातीत है। वे ज्ञान, बल, बुद्धि ऐश्वर्य दया, कृपा, भक्तवत्सलता आदि दिव्य गुणवाले हैं। वे सर्वशक्तिमान् सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, सर्वज्ञ, सर्वरूप, और सर्वशासक हैं। जगत के वे ही कर्ता, धर्ता और संहर्ता है। सृष्टि उन्ही की लीला विलास है। यहाँ भी सर्वव्यापी "सिय राममय सब जग जानी" कहा गया है। श्रीतुलसीदासजी के मत में साक्षात्परब्रह्म भक्तहितकारी दशरथ पुत्र श्रीरामचन्द्रजी हैं। (रा. मा. १.११८)

जो स्वयं आनन्दरूप, उपाधि और उपमा रहित हैं जिसके अंश से अनेक शिव और ब्रह्मा उत्पन्न होते हैं, जिसके स्मरण मात्र से अज्ञान मिट जाता है वही सर्वज्ञ श्रीराम हैं। (रा. मा. १.५२.४) वे प्रभु होकर भी सेवक तथा भक्त पर अनुग्रह करते हैं (रा. मा. १.१४३.५.७) यद्यपि वे अकाम है तथापि भक्त के विरह दुःख से दुःखित रहते हैं। (रा. मा. १.७५.२)

भगवान् ने जब अंगद की प्रीति के विषय में सुना तो वे उसके प्रेम में मग्न हो गये। अयोध्या लौटने पर दयासिन्धु भगवान् अपने अनेकरूप धारण कर क्षणभर में सबसे मिललिये यह मर्म किसी ने भी नहीं जाना। (७.५.७) रावण भी श्री राम में भगवत्ता का अनुमान करता है। "सुर रंजन भंजन महिभारा। जौं भगवन्त लीन्ह अवतारा।" इत्याकारसे।

भगवती श्रीसीता श्रीराम की परम शक्ति है। वेही उनकी प्रिया हैं। (रा. मा. १.१८.७.३) श्री राम और श्रीसीता अभिन्न हैं। जैसे सूर्य और प्रभा का सम्बन्ध है चन्द्रमा और

चन्द्रिका का सम्बन्ध है वैसे ही श्रीराम और श्रीसीताजी का सम्बन्ध है (रा. मा. २.९७.३, १.१८) । वे श्रीराम की आदि शक्ति जगन्मूला है । (१।१४८।१) वे विश्व का उद्भव पालन और संहार करनेवाली है । वे जगज्जननी जगदम्बा है । उनके भृकुटि विलास से ही विश्व निर्मित हो जाता है । त्रिदेव शक्तियाँ उनके अंशमात्र से उत्पन्न हो जाते हैं । इस प्रकार भगवान् श्रीराम परम ऐश्वर्य सम्पन्न हैं । उनके अवतार का प्रयोजन पृथ्वी के भारस्वरूप (सन्तों के दुःखदायी) राक्षसों का वध करना था । इस प्रकार श्रीरामोपासना में सर्वशक्तिमान् जगदादिकारण की ही उपासना है अन्य की नहीं ।

श्रीमद्भागवत में श्रीहनुमान्‌जी ने आदिपुरुष महापुरुष भगवान् श्रीरामजी को प्रणाम इस प्रकार से किया है—

सुरोऽसुरोवाप्यथवानरो नरः सर्वात्मनायः सुकृतज्ञमुत्तमम् ।
भजेत रामं मनुजाकृतिं हरिं य उत्तराननयत् कोसलान् दिवमिति ॥
(श्रीमद्भा. ५.१९.८)

अर्थात् सुर असुर, वानर, नर रूप सभी प्राणीयों को जो अपने दिव्य धाम साकेत में ले गये उस परम पुरुष श्रीराम को नमस्कार है । श्री शुकदेवजी ने भी कहा है—

भगवानात्मनात्मानं राम उत्तमकल्पकैः ।
सर्वदेवमयंदेवमीज आचार्यवान् मखैः ॥

प्रकृत श्लोक की शुकार्यमतदीपिका में जगद्गुरु श्रीगङ्गाधराचार्यजी लिखते हैं—भगवान् श्रीराम उत्तमकल्पकैः श्रीवशिष्ठ प्रभृति यज्ञकल्पविद्भिरुत्तमयाजकैर्याजितैर्मखैः सर्वदेवमयं सर्वदेव स्वरूपमाचार्यवान् सन् देवं स्वमात्मानमेवाऽऽत्मनैवेजे स्वातिरिक्तपरमपुरुषाभावेऽपि स्वात्मानमात्मनैव लोकशिशिक्षयेष्टवानित्यर्थः" (श्रीमद्भागवत ९.११.१)

अर्थात् आचार्यवान् होकर भगवान् श्रीरामजी ने उत्तम सामग्री से श्रीवशिष्ठादि महर्षि के अध्यक्षपने में पूर्ण यज्ञद्वारा सर्वदेवमय देव यानी अपनी ही आत्मा का पूजन अपने से ही किया। क्योंकि अपने से अतिरिक्त परपुरुष के अभाव में किस की पूजा की जा सकती ? अतः महर्षि ने लिखा 'आत्मनाऽऽत्मानम्।'

अगस्त्य संहिता के अनुसार—"सर्वेषामवताराणामवतारी रघूत्तमः" हैं तो श्रीरामजी में सर्वातिशायित्व प्रस्फुटही है।

रामस्तवराज में श्री व्यासजी ने कहा है—

धर्मराज महाभाग श्रृणु वक्ष्यामि तत्त्वतः।
यत्परं यद् गुणातीतं यज्ज्योतिरमलं शिवम्॥
तदेव परमं तत्त्वं कैवल्यपदकारणम्।
श्रीरामेति परं जाप्यं तारकं ब्रह्मसंज्ञकम्॥

अर्थात् कैवल्यपद के कारण स्वरूप गुणातीत स्वयं प्रकाशस्वरूप मंगलस्वरूप, ब्रह्मपदवाच्य, सर्वजन तारक भगवान् परमतत्त्व श्रीरामजी ही जप और ध्यान के योग्य हैं।

इस प्रकार रामोपासना का आधारभूत तत्त्व परब्रह्मतत्त्व ही हैं जो सर्वव्यापक, अन्तर्यामी, त्रिगुणातीत, चराचर जगत् के स्रष्टा धर्ता और संहर्ता होते हुये भी

"सर्वे प्रपत्तेरधिकारिणः सदा शक्ता अशक्ता पदयोर्जगत्प्रभोः।
अपेक्षते तत्र कुलं वलं च नो न चापि कालो न च शुद्धतापि वै॥"
(श्रीवैष्णवमताब्जभास्कर ४।५०)

इस जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यजी के लोकोत्तर चमत्कारक दिव्य घोषणा के अनुसार सर्वशरण्य श्रीरामप्रपन्न सर्वजीवों से सुलभ हैं।

रामाय विष्णुरूपाय ब्रह्मणे परमात्मने।
समर्प्यतेऽत्र वाक् पुष्पमुमारमणशर्मणा॥

❀

श्रीहनुमान् का प्राचीन साहित्य में चर्चा

ऋग्वेद में एक स्थल पर श्रीहनुमान् की चर्चा हुई है—

"ममच्चन ते मघवन् व्यंसो निविविध्वां अप हनू जघान।"

ऋ. ४.१८.१९

अर्थात् इन्द्र ने श्रीहनुमान् के चिबुक पर प्रहार किया। और वाद में उस कपीश्वर को पुनः चिबुक जोड़ दिया गया जिससे वे श्रीहनुमान् कहलाये। वाल्मीकि रामायण में भी इस बात की पुष्टि की गई है—

मत्करोत्सृष्टवज्रेण हनुरस्य यथा हतः।
नाम्ना वै कपि शार्दूलो भविता हनुमानिति ॥ वा. रा. ७.३६.११

अर्थात् इन्द्र ने कहा-मेरे द्वारा चलाये गए वज्र से इनकी हनु टूटी है, इसलिए अव इन ढुड्डी (चिबुक) पर किसी के प्रहार का असर नहीं होगा और यह कपिशार्दूल हनुमान् नाम से प्रसिद्ध होगा। इन्हें ब्रह्मा का भी वरदान मिला कि इनका शरीर ब्रह्मास्त्र से भी प्रभावित नहीं होगा। इनपर अस्त्र या शस्त्र का प्रभाव नहीं पडेगा।

तथैव श्रीमैथिली महोपनिषद् के पांचवें उपनिषद् में श्रीराम मन्त्रराज के परंपराप्रसंग में सर्वेश्वरी श्रीजानकीजी ने मुनीश्वरों को कहा है-"इममेव मनुं पूर्वं साकेतपतिर्मामवोचत्। अहं हनुमते मम प्रियाय प्रियतराय।" यही षडक्षर श्रीराममन्त्र श्रीसाकेत के पति-स्वामी सर्वेश्वर श्रीरामचन्द्रजी ने मुझे कहा अर्थात् सविधि उपदेश दिया, मैंने मेरे प्रियातिप्रिय सेवक श्रीहनुमान्‌जीको सविधि उपदेश दिया। इसी का अविकल उल्लेख श्रीवाल्मीकि संहिता में मिलता है-"आद्यां शक्तिमहादेवीं श्रीसीतां जनकात्मजाम्। तारकं मन्त्रराजं तु श्रावयामास ईश्वरः। जानकी तु जगन्माता हनूमन्तं गुणाकरम्। श्रावयामास नूनं स ब्रह्मणं सुधियां

वरम्" । २.३३-३४ इस प्रकार श्रीहनुमानजी का उल्लेख वैदिक साहित्य में यत्र तत्र प्रचूर मात्र में उपलब्ध होता है ।

ब्रह्मवैमर्तपुराण के अनुसार श्रीहनुमान् की नजर में लंका वानर के शिशु के समान तुच्छ, समुद्र पेसावजल के समान थोडा धरातल छोटे कटोरे के समान और रावण की सेना चींटियों के समान लगते थे । ब्र. वै. पु० ६२.७५-७६

अध्यात्म रामायण में श्रीहनुमान्जी का द्वादश नाम का मन्त्र इस प्रकार है-

हनुमानञ्जनीसूनुर्वायुपुत्रो महाबलः ।
रामेष्टः फाल्गुनसखः पिङ्गाक्षोऽमितविक्रमः ॥
उदधिक्रमणश्चैव सीताशोकविनाशनः ।
लक्ष्मणप्राणदाता च दशग्रीवस्य दर्पहा ॥
एवं द्वादशनामानि कपीन्द्रस्य महात्मनः ।
स्वापकाले प्रबोधे च यात्राकाले च यः पठेत् ॥
तस्य सर्वभयं नास्ति रणे च विजयी भवेत् ।
राजद्वारे गह्वरे च भयं नास्ति कदाचन ॥

आ. रा ८.१३.८.११

श्रीहनुमान् का जन्म चैत्र मास के शुक्लपक्ष की पूर्णिमा तिथि को मघा नक्षत्र में हुआ था—

"चैत्रे मासि सिते पक्षे पूर्णिमायां शुचौ तिथौ। नक्षत्रे स समुत्पन्नो हनुमान् रिपुसूदनः ।" आनन्द रामायण सार. १३.१६२

"स्वात्यां कुजे शैवतिथौ तु कार्तिके कृष्णेऽञ्जनागर्भत एव मेषके । श्रीमान् कपीट्प्रादुरभूत् परन्तपो व्रतादिना तत्र तदुत्सवं चरेत् ॥'

(श्रीवैष्णवमताब्जभास्कर ४.३२)

यानी कार्तिकमास कृष्णपक्ष चतुर्दशीतिथि मंगलवार तथा मेष लग्न के उदय अर्थात् सायंकाल में शत्रुसन्तापक श्रीमान् कपीश्वर श्रीहनुमान्जी अंजना के गर्भसे आविर्भूत हुये । इस

शुभ तिथि में भक्तलोग श्रीहनुमान्‌जी का व्रत पूजनादि करें। ऐसा विधान श्रीआचार्य चरणका है। यों उक्त दोनों ही तिथि श्रीहनुमान्‌जी के अवतार तिथि के रूप में प्रचलित हैं तथापि जनसाधारण में अधिक प्रचलित कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी है इसी तिथि में अयोध्या आदि प्रमुख तीर्थ स्थान तथा आचार्य-पीठोंमें जयन्ती मनाई जाती है।

❋ जन्मकथा ❋

श्रीहनुमान्‌जी को अंजनीपुत्र, पवनसुत, शंकर सुवन तथा केसरीनन्दन आदि नाम से जाना जाता है। यहाँ एक कथा इस प्रकार है–

"पुंजिकस्थला" नाम की एक सुन्दरी अप्सरा थी। उसने एक तपस्वी ऋषि का उपहास कर दिया। उस तपस्वी महात्मा ने उस अप्सरा को शाप दिया कि तुम बन्दर वन जा। अप्सरा डर से काँपने लगी और क्षमा याचना करने लगी। ऋषि ने कहा "शाप के कारण तुम्हें वानरी रूप में रहना ही पडेगा परन्तु तुम इच्छानुसार मनुष्य रूप भी धारण कर सकोगी। वही कपि योनि में कुंजर की पुत्री अंजना के रूप में उत्पन्न हुई और उनका विवाह कपिराज केसरी के साथ हुआ। निःसन्तान होने के कारण वे दोनों बहुत दुःखी थे।

इधर ब्रह्माने दुःखी होकर श्रीशंकर के पास कहा हे प्रभो! भगवान् विष्णु आदि देवों से अवध्य रावणादि राक्षसों के नाश केलिए सर्वावतारी सर्वेश्वर श्रीरामजी ने हमारी प्रार्थना सुन ली है। अव आप भी हमें मदत करें। भगवान् शङ्कर ने कहा–ठीक है। मैं भी सहयोग करुंगा। भगवान् शङ्कर को विष्णु के मोहिनीं रूप का दर्शन करने की इच्छा हुई। फिर भगवान् विष्णु ने मोहिनी रूप धारण किया। कामवासना से ओतप्रोत

शङ्कर उस मोहिनी के पीछे दौड़ने लगे। भगवान् शङ्कर में कामो-त्तेजना बढ़ती गयी और उनका तेजस्खलित हो गया। सप्तर्षियों ने पत्ते के दोने में शङ्करजी के तेज को संगृहीत करके श्रीराम-कार्य की सिद्धि के लिए कान के द्वारा अञ्जना के गर्भ में रख दिया। उसी के कारण आञ्जनेय, शंकरसुवन तथा केसरीनन्दन आदि उनके नाम हैं।

चैत्र शुक्ल पूर्णिमा पक्षान्तर में कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी मंगलवार को अञ्जना के गर्भ से भगवान् शङ्कर ने वानर रूप से अवतार ग्रहण किया था। गोस्वामी श्री तुलसीदासजी ने दोहा-वली में लिखा है—

जेहि सरीर रति राम सों सोइ आदरहिं सुजान।
रुद्र देह तजि नेह बस संकर भे हनुमान।
जांनि राम सेवा सरस समुझि करव अनुमान।
पुरुषा ते सेवक भए हर ते भए हनुमान॥

(दोहावली—१४२—१४३)

जामवन्तने कहा है कि श्रीहनुमान् की सिद्धि करने पर सब कार्य सफल हो जाते हैं—

कवन सो काज कठिन जग माही।
जो नहिं होइ तात तुम पाँही॥

ब्रह्माजी ने हनुमान् जी को वरदान दिया था कि तुम पर ब्रह्मशाप का असर नहीं होगा। शस्त्र से तुम्हारे शरीर का कोई भी अंग नहीं टूटेगा। इन्द्र ने हनुमान्जी के कंठ में कभी न मुरझाने वाली कमलों की माला दी और उन्हें आशीर्वाद दिया कि अब उनके शरीर पर वज्र का भी असर नहीं होगा। सूर्यदेव ने कहा कि यह अद्वितीय विद्वान् और वक्ता होगा। कुवेर ने कहा मेरी गदा का प्रहार भी इनपर व्यर्थ होगा। भगवान् शङ्कर ने उन्हें अवध्य होने का वचन दिया। विश्वकर्मा ने कहा मेरे द्वारा बनाये गये अस्त्रशस्त्रों का प्रभाव इन पर नहीं पडेगा।

श्रीरामजी की विजय सत्व गुण की तामस गुण पर विजय है जिसमें श्रीहनुमान्‌जी साथ हैं। हनुमान् का प्रेम निःस्वार्थ है। मातृशक्ति पर श्रीहनुमान्‌जी को बहुत विश्वास है। उत्तर काण्ड में गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी ने कहा है—पुण्यं पापहरं सदा शिवकरं विज्ञान भक्तिप्रदम्। और उसका मूल स्रोत श्रीहनु-मान्‌जी ही है जो श्रीराम के दूत के रूप में प्रकट हुए हैं।

* रुद्रावतार हनुमान् *

कुछ विद्वानों के अनुसार हनुमान् भगवान् शङ्कर के रुद्रा-वतार हैं। १६ वीं शताब्दी के विद्वान् पं० नीलकण्ठ दीक्षित ने "मन्त्ररामायण" नामक ग्रन्थ में इस कथा की पुष्टि की है। ऋग्वेद में एक मन्त्र इस प्रकार है—

स रुद्रेभिरवशस्तवार ऋभ्वां हित्वी गयमारे अवद्य आगात्।
वम्रस्य मन्ये मिथुना विवव्री अन्नमभीत्यारोदयन्मुपायन॥
(ऋग्वेद १०.९.९५)

सः-अवशस्तवारः=वह श्री राम प्रतिकूल वनवास काल को हित्वा=पारकरके रावणरूपचोर के द्वारा हरण की गयी अन्नम्=पृथ्वी रूपा श्रीसीता को अभीत्य=प्राप्त किया। अरोदयत्—दशमास तक रावण के पास रहनेवाली श्रीसीता रोने लगी। फिर लोकापवाद के लिए अग्नि परीक्षा करके अवद्य ओर=उन्हें निर्दोष मानकर ऋभ्ना =ऋत अर्थात् सत्य पतिव्रता सीताके साथ रुद्रेभिः=हनुमान् आदि वानरों के साथ गयम् आगात्=अयोध्या चले गये। प्रकृत मन्त्र का बोधायन महर्षि श्रीपुरुषोत्तमाचार्यजी सम्पादित वेदरहस्यम् के ५वें मन्त्र के रूप में समावेश है। वेदरहस्यम् में जगद्गुरु श्री राघवानन्दाचार्यजी (वि॰ सं. १२०६–१३९६) ने रहस्यमार्तण्ड भाष्य लिखा है। उसमें इस मन्त्र को श्रीरामचरित का मूल सूचकतया निरूपण करते हुये 'रुद्रेभिः' का व्याख्यान "हनुमदा-

दिभिः सहायैः सहैव" किया है अतः यह स्पटतर है कि श्री हनुमानजी रुद्रावतार हैं ।

अगस्त्य संहिता में भी श्रीहनुमान्जी को रुद्रावतार के रूप में स्वीकार किया गया है । शिव महापुराण (२०वाँ अध्याय शतरुद्र संहिता) के अनुसार भी ये शिव के पुत्र हैं । वंगीय महाभागवतपुराण में भी श्रीहनुमानजी को रुद्रावतार माना गया है।

वृहद्धर्म पुराण के अनुसार जब भगवान् विष्णु अर्थात् सर्वावतारी श्रीराम विष्णु आदि अन्य देवोंसे अवध्य रावण के संहार करने के लिए दशरथ नन्दन श्रीराम के रूप में अवतार लेने लगे तो शिवजी ने कहा था कि वे वानररूप में विष्णु की सहायता करेंगे—

अहं वानररूपेण संभूय पवनात्मजः ।
साहाय्यं ते करिष्यामि ... ... ॥

भविष्यपुराण के अनुसार (भ. पु. चतुर्थखण्ड १३.३१.३६) श्रीहनुमान्जी के पिता केसरी थे लेकिन रुद्र तथा वायु उनको उत्पन्न करने में सहायक थे ।

भविष्य पुराण में कथा है कि शिव का रुद्र तेज केसरी के मुख में प्रवेश कर गया। फिर केसरी लगातार १२ वर्षों तक अञ्जना के साथ संभोग करते रहे और फिर अञ्जना गर्भवती हुई जिससे हनुमान् उत्पन्न हुए ।

हनुमन्नाटक (अङ्क ५.३३) के आनुसार आञ्जनेय हनुमान् शङ्कर के ही रुद्र रूप हैं इस महानाटक में कहा गया है कि रावण ने दश सिर चढाकर दस रुद्रों को प्रसन्न कर लिया था। लेकिन ग्यारहवां रुद्र को रावण ने मानो अपमान ही किया जिसके कारण श्रीहनुमानजी ने ग्यारहवें रुद्र के रूप में लङ्का का विनाश कर दिया ।

बंगाल के कृतिवासीय रामायण में भी इस कथा की पुष्टी हुई है। गोस्वामी जी ने भी दोहावली में लिखा है—

जेहि सरीर रति राम सो सोइ आदरहिं सुजान।
रुद्र देह तजि नेह वस शंकर भे हनुमान ॥ (दोहा १४२.३)

नारसारोपनिषद् के अनुसार

"मकाराक्षरसंभूतः शिवस्तु हनुमान् स्मृतः।"

अर्थात् मकार अक्षर रूप शिव ही श्रीहनुमान्जी हैं। इसलिए वहीं पर आगे कहा गया है—

ॐ यो ह वै श्रीपरमात्मा नारायणः स भगवान् मकारवाच्यः शिवस्वरूपो हनूमान् भूर्भुवः स्वः तस्मै वै नमो नमः। ना.सा.३.३

शिवजी आदित्यों में वासुदेव और वानरों में हनुमान हैं-

"आदित्यानां वासुदेवो हनुमान् वानरेषु च।"

स्कन्दपुराण के अनुसार भगवान शंकर अपने भक्त अनुचर शिलाद ऋषि के पुत्र रूप में नन्दी बनकर उत्पन्न हुये। वही एकादश रुद्र रूप श्रीहनुमान् हैं—

शिलादतनयो नन्दी शिवस्यानुचरः प्रियः।
यो वै चैकादशो रुद्रो हनुमान् स महाऋषिः ॥
अवतीर्णः सहायार्थं विष्णोरमिततेजसः।

स्क. पु. मा. के. ८।९९-१००

शिवपुराण के अनुसार एकबार भगवान् शिवजी विष्णु के मोहिनीरूप पर आकृष्ट होकर कामवाण से आहत हुये। उसी समय उनका तेज श्रीरामकार्य सम्पादनार्थ स्खलित हुआ सप्तर्षियो ने उस तेज को एक पत्र में रख लिया। गौतम की पुत्री अञ्जनीं (जो केसरी की पत्नी थी) के गर्भ में कान द्वारा प्रवेश कराकर रख दिया। भगवान् शिव का वही तेज अत्यन्त बलवान तथा पराक्रमी श्रीहनुमान हैं। (शि.पु. २०।३-७)

श्रीविद्यार्णव और सुदर्शन संहिता में भी कहा गया है-

बालैक ब्रह्मचर्याय रुद्रमूर्तिधराय च ।

अर्थात् आबालब्रह्मचर्य रुद्रमूर्ति हनुमान को नमस्कार है ।

शिवपुराण से उन्हें "शिवावतार:" "रुद्रांश:" महादेवात्मज और शंभु कहा गया है। (शिव पु० २०।९, २०।१२, २०।३२ २०।७) नारदपुराण में "प्रसन्न मूर्तिस्तरुण: शिवांश:" कहा गया है । (ना. पु. तृतीय ७९।३५३) और वहीं पुन:-

लोकोत्तरगुण: श्रीमान् पातुत्र्यम्बकसम्भव: ।

कहकर उन्हें त्र्यम्बक शिव से उत्पन्न माना गया है ।

वायुपुराण में भी कहा गया है-

कार्तिक स्यासिते पक्षे स्वात्यां भौमे च मारुति: ।
मेषलग्नेऽञ्जनागर्भात् स्वयं जातो हर: शिव: ।।

गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी ने भी दोहावली में लिखा है—

जेहि शरीर रति राम सो, सोइ आदर हि सुजान ।
रुद्र देह तजि नेह बस, बानर भे हनुमान ।।

इसलिए यह ठीक ही कहा गया है कि

मकाराक्षर सम्भूत: शिवस्तु हनुमान् स्मृत: ।

अर्थात् शिव के ही अंश हनुमान् हैं ।

* कथा *

श्रीहनुमान्जी के प्रसंग में अनेक कथाएहैं यहाँ अति संक्षेप से कुछ कथाओं का संकेत करता हूँ ।

एकबार श्रीहनुमानजी को श्रीरामचन्द्रजी ने सबसे प्रिय रत्नहार उपहार में दिया। श्रीहनुमानजी उस हार के एक-एक मणि को चूर चूर कर उसमें श्रीरामजी को ढूढने लगे । इस पर किसी ने हनुमान से पूछा-क्या आप के शरीर में राम नाम लिखा

है ? इस पर हनुमानजी ने अपने वज्रनख से अपनी छाती का चमड़ा उधेड दिया और सबों को दिखा दियाकि उनके रोम रोम में श्रीराम लिखा हुआ था। इसलिए कविने ठीक ही लिखाहै–

राम माथ, मुकुट राम, राम सिर, नयन राम,
राम कान, नासा राम ठोढ़ी राम–नाम है।
राम कंठ, कंध राम, राम भुजा बाजूबंद
राम हृदय अलंकार, हार राम नाम है॥
राम उदर, नाभि राम, राम कटी. कटी सूत,
राम बसन जंघ राम, जानु पैर राम नाम है।
राम मन वचन राम, राम गदा कटक राम,
मारुति के रोम–रोम व्यापक राम नाम है॥

इस प्रकार श्रीराम से ओतप्रोत श्रीहनुमानजी का सम्पूर्ण शरीर तथा उनके आयुध है।

स्कन्द पुराण के अवन्तीखण्ड में कथा है कि ऋषियों ने उन्हें शाप दिया था जिस कारण हनुमानजी अपने पराक्रम को भूल जाते हैं बाली के अपराध को देखकर भी उसे नहीं मारने का भी यही कारण है। मुनियोंने हनुमानजी के इस विषय में श्रीराम से कहा था—

न बले विद्यते तुल्यो न गतौ न मतावपि।
अमोघवाक्यैः शापस्तु दत्तोऽस्य मुनिभिः पुरा॥
न ज्ञातं हि बलं येन बलिना वालिमर्दने। (अ. ७९.२१.२२)

हनुमानजी ने अनेक तीर्थों की भी स्थापना की थी। अवन्तीखण्ड के ८३वें अध्याय में कथा है कि श्रीहनुमानजी स्वयं अपने हाथों ब्रह्महत्या के परिमार्जनार्थ नर्मदा के तट पर 'हनुमन्तेश्वर' लिङ्ग की स्थापना की थी।

स्कन्दपुराण के ब्रह्मखण्ड के अनुसार रामेश्वर लिङ्ग की स्थापना के लिए हनुमानने ही कैलाश से शिवलिङ्ग लाया था।

शुभमुहूर्त्त में हनुमानजी के न लौटने पर श्रीसीताजी द्वारा निर्मित सैकत लिङ्ग की स्थापना कर दी गयी। जब हनुमान कैलाश से शिव प्रदत्त "लिङ्ग" लेकर पहुँचेतो वे बडे दुःखी हुए। बादमें श्रीरामचन्द्रजी ने उस लिङ्ग की भी स्थापना की जो 'हनुमल्लिङ्ग' के नाम से प्रसिद्ध है।

उत्तरं रामनाथस्य लिङ्गस्वेनाहृतं पुरा।
आज्ञया रामचन्द्रस्य स्थापयामास वायुजः॥ ब्रह्मखण्ड ४६.७७

स्कन्दपुराण के ब्रह्मखण्ड के अनुसार गन्धमादन पर्वत पर हनुमत्कुण्डं नामक पवित्र तीर्थ है—

सर्वलोकोपकाराय हनुमान् मारुतात्मजः।
सर्वतीर्थोत्तमंचक्रे स्वनाम्ना तीर्थमुत्तमम्॥ (स्क. ब्रह्मखण्ड १५.३)

एक बार नारद के मन में उत्कण्ठा हुई कि भगवान् के सबसे अधिक प्रिय कौन हैं। नारद तीनों लोकों में भटकते रहे। इन्द्र, ब्रह्मा प्रल्हाद आदि के पास भी गये। अन्त में प्रह्लाद ने नारद को बताया कि श्रीहनुमान ही भगवान के असली सेवक और कृपापात्र हैं। तब नारदजी हनुमान के पास जाकर कहने लगे—

श्रीमन् भगवतः सत्यं त्वमेव परमप्रियः।
अहं च तत्प्रियोऽभूवमद्य यत्त्वां व्यलोकयम्॥
(बृहद्भागवतामृत १-४-६१)

* श्रीहनुमान्जी का वैदुष्य *

जब श्रीराम के पास श्रीहनुमान् सबसे पहले किष्किन्धा में पहुचे और बात करने लगे तो श्रीराम और लक्ष्मण दोनों ही उनसे बहुत प्रभावित हुए। हनुमान् का उच्चारण बहुत ही शुद्ध था। इसलिए श्रीराम विस्मय में पड़कर लक्ष्मण से कहते हैं कि ऐसा स्वर उसी का हो सकता है जिसने ऋग्वेद, यजुर्वेद और

सामवेद का अध्ययन किया हो। विना वेदों के अभ्यास से ऐसा कोई व्यक्ति नहीं बोल सकता है—

नानृग्वेदविनीतस्य नायजुर्वेदधारिणः।
नासामवेदविदुषः शक्यमेवं प्रभाषितुम्॥ कि० ३.२८

श्रीहनुमान्जी कीं बातों को दोनों भाई बडी देर तक सुनते रहे परन्तु एक भी अशुद्धि कहीं नहीं हो रही थी। श्रीहनुमान्जी को व्याकरणशास्त्र का बड़ा अच्छा ज्ञान था। श्रीरामचन्द्रजी ने भी लक्ष्मण से कहा—

नूनं व्याकरणं कृत्स्नमनेन वहुधा श्रुतम्।
वहु व्याहरतानेन न किञ्चिदपशब्दितम्॥ कि० ३.२९

लंका से लौटने पर अंगद ने श्रीहनुमान् की प्रशंसा करते हुए कहा है—

हनुमतीह सिद्धिश्च मतिश्च मतिसत्तम।
व्यवसायश्च सौर्यञ्च श्रुतञ्चापि प्रतिष्ठितम्॥

अर्थात् हनुमान् में सिद्धि, बुद्धि, साहस, वीरता और वेदादिका ज्ञान भरा हुआ है। इसलिए ज्ञानियों में इन्हे अग्रगण्यमानकर "ज्ञानिनामग्रगण्यम्" कहा है।

श्रीहनुमानजी जब समुद्रलंघन कर रहे थे उस समय देवता लोग उनके विशाल रूप को देखकर विस्मित हो गये। सुरसा के शरीर में प्रवेश कर और पुनः बाहर निकल जाना एक बडी बुद्धि मानी थी। इसलिए देवताओं ने प्रशंसा करते हुए कहाथा—

यस्य त्वेतानि चत्वारि वानरेन्द्र यथा तव।
धृतिर्दृष्टिर्मतिर्दाक्ष्यं न स कर्मसु सीदति॥
(वा० सुन्दर १.१९८)

अर्थात् जिसके पास धैर्य, दृष्टि, मति और दक्षता (आपके जैंसा) रहे वह कभी भी कार्य में असफल नहीं हो सकताहै।

वाल्मीकि ने लिखा है कि हनुमान् में पराक्रम, उत्साह, मति, प्रताप, सुशीलता, मधुरता, नीतिज्ञान, गाम्भीर्य, चातुर्य, बल और धैर्य अद्भुत हैं। उनके समान किसी दूसरे के पास ये गुण नहीं हो सकते हैं—

पराक्रमोत्साहमतिप्रताप—सौशील्यमाधुर्यनयानयैश्च ।
गाम्भीर्यचातुर्यसुवीर्यधैर्यैर्हनुमतः कोऽप्यधिकोऽस्ति लोके ॥

वा० रा. ७.३६.४४

हनुमान्‌जी को बुद्धिमानों में श्रेष्ठ कहा गया है—
"जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् ।"

वे इतने बुद्धिमान् थे कि श्रीसीताजी को विशुद्ध संस्कृत भाषा में कुछ नहीं कहना चाहते थे। वाल्मीकि ने लिखा है—

यदि वाचं प्रदास्यामि द्विजातिरिव संस्कृताम् ।
रावणं मन्यमाना मां सीताभीता भविष्यति ॥

अर्थात् ब्राह्मण की तरह अगर मैं संस्कृत में बोलूगा तो रावण समझकर श्रीसीता मुझ से डर जायगी।

बाल्मीकि रामायण के किष्किन्धाकाण्ड में श्रीहनुमान्‌जी के पाण्डित्य एवं चतुरता के विषय में स्वयं श्रीरामने कहा है—

न मुखे नेत्रयोश्चापि ललाटे च भ्रूवोस्तथा ।
अङ्गेष्वपि च सर्वेषु दोषः संविदितः क्वचित् ॥
अविस्तरमसंदिग्धमविलम्बितमव्ययम् ।
उरस्थं कण्ठगं वाक्यं वर्तते मध्यमस्वरम् ॥
संस्कारक्रमसम्पन्नामद्भुतामविलम्बिताम् ।
उच्चारयति कल्याणीं वाचं हृदयहर्षिणीम् ॥

बा. रा. किष्किन्धा ३.३०.३२

अर्थात् वार्तालाप के समय इनके मुँखसे कभी भी अप शब्द का प्रयोग नहीं हुआ है। मुख, नेत्र, ललाट, भौं आदि

अंगों पर किसी भी प्रकार की विकृति नहीं आ पायी है। असंदिग्ध, संक्षिप्त विना कारण न विस्तृत और न अस्वाभाविक संक्षिप्त वाक्य का प्रयोग मध्यम स्वर से इसने किया है। इसकी वाणी का उच्चारण संस्कार अद्भुत तथा शीघ्र हृदय को आनन्दित करनेवाला है। हृदय, कण्ठ और मूर्धा इन तीनों स्थानों के द्वारा स्पष्टरूप से अभिव्यक्त होने वाली इसकी इस प्रकार विचित्रवाणी को सुनकर किसका चित्त प्रसन्न न होगा। वस्तुत वध करने के लिए तलवार उठाये हुए शत्रु का भी हृदय इस अद्भुत वाणी से बदल सकता है।

वाल्मीकि रामायण में ही अगस्त्य ने श्रीहनुमान् की शास्त्रज्ञता और व्याकरणज्ञता की प्रशंसा की है—

ससूत्रवृत्त्यर्थपदं महार्थं ससंग्रहं सिद्ध्यति कपीन्द्रः।
न ह्यस्य कश्चित्सदृशो हि शास्त्रे वैशारदे छन्दगतौ तथैव॥
सर्वासु विद्यासु तपोविधाने प्रस्पर्धते यं हि गुरुं सुराणाम्।
सोऽयं नवव्याकरणार्थवेत्ता ब्रह्मा भविष्यत्यपि ते प्रसादात्॥

वा० रा० उत्तर ३६।४६–४७

अर्थात् श्रीहनुमान्‌जी ने सूत्र, वृत्ति, वार्त्तिक, महाभाष्य और संग्रह इन सबका पूर्णरूप से अध्ययन किया है। शास्त्रों के ज्ञान में तथा छन्दशास्त्र के अध्ययन में इनके समान दूसरा विद्वान् नहीं है। ज्ञान और तपस्या में ये बृहस्पति के समान हैं। नव व्याकरण के यथार्थज्ञाता श्रीहनुमान् निश्चय ही ब्रह्मा के समान सदा समादरणीय रहेंगे।

श्रीहनुमान् की दूरदर्शिता का उदाहरण सर्वत्र मिलते हैं। श्रीसीता कीं खोज में श्रीहनुमान्‌जी ने लंका में सूक्ष्म रूप बना कर प्रवेश किया—

सूर्ये चास्तं गते रात्रौ देहं संक्षिप्यमारुतिः।
वृषदंशकमात्रोऽथ बभूवाद्भुतदर्शनः॥

प्रदोषकाले हनुमांस्तूर्णमुत्प्लुत्य वीर्यवान् ।
प्रविवेष पुरीं रम्यां प्रविभक्तमहापथाम् ॥

वा० रा० सुन्दर २।४९-५०

वस्तुतः बहुत सोंचविचार कर हनुमान्‌जी ने रात्रि के समय सूक्ष्मरूप बनाकर लंका में प्रवेश किया था और वहां शस्त्रागार, सैन्यागार तथा रावण के ऐश्वर्य आदि का भी पता लगाया ।

जब विभीषण पहले पहल श्रीरामजी के आश्रय में आये तो सुग्रीव तथा अन्य वानर विभीषण को आश्रय नहीं देना चाहते थे । तब श्री राम ने अपना निर्णय श्रीहनुमान्‌जी पर छोड़ दिया । श्रीहनुमान्‌जी ने नीतिपूर्वक सबों को समझा कर विभषण को अपने पक्ष में कर लिया ।

(वा० रा० युद्ध १७।६४-६७)

गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी के अनुसार भगवान् ने जब विभीषण को शरण देने का वचन दिया तो हनुमान्‌जी प्रसन्न होगये-

सुनि प्रभु वचन हरष हनुमाना । सरणागत बच्छल भगवाना ।

(रा० मा० सुन्दर ४२।५)

श्रीसीतान्वेषण करते समय हनुमान् की बहुत प्रकार से परीक्षा ली गयी थी परन्तु हनुमान् सफल निकले । उनके बाधक का हमेशा ही निवारण हुआ ।

मैनाक पर्वत के द्वारा पुनः पुनः प्रार्थना करने पर भी वे वहाँ नहीं ठहरे केवल स्पर्श करके हनुमानजी आगे बढ़ गये । नागमाता सुरसा से देवताओं ने परीक्षा के लिए श्रीहनुमान्‌जी के कार्यमें विघ्न डालने के लिए कहा था। पहले तो हनुमान्‌जी ने सुरसा से प्रार्थना पूर्वक कहा-

अथवा मैथिलीं दृष्ट्वा रामं चाक्लिष्टकारिणम् ।
आगमिष्यामि ते वक्त्रं सत्यं प्रतिशृणोमि ते ॥

अर्थात् यदि तू मुझे खाना ही चाहती है तो मैं श्रीसीता जी का दर्शन करके श्रीराम से मिलूंगा, तब मैं स्वयं तुम्हारे मुख में आजाऊँगा। सुरसा के द्वारा बात नहीं मानने पर अन्त में अपना छोटा रूप बनाकर उसके पेट में जाकर पुनः बाहर आ गये। तब नागमात ने श्रीहनुमानजी को बुद्धिबल में जीतजाने का प्रमाणपत्र दे दिया—

मोहि सुरन्ह जेहि लागि पठावा, बुधि बल मरमु तोर मैं पावा।
(रा०मा० सुन्दर १।६)

श्रीहनुमान् ने श्रीसीताजी के साथ भी बहुत बुद्धिमानी के साथ वार्तालाप किया और अशोक वाटिका में ही उन्हें सान्त्वना पूर्वक धैर्य धारण करने लायक बना दिया।

साम दाम दण्ड और भेद में दण्ड ही देना राक्षसों को उचित है ऐसा श्रीहनुमान्जी ने सोचा और लंका का नाश कर दिया।

इस प्रकार से हम देखते हैं कि श्रीहनुमान्जी निश्चय ही ज्ञानियों में श्रेष्ठ हैं। इनके जोड का विश्व में आजतक न हुआ है न वर्तमान में है न भविष्य में ही होने की सम्भावना हैं अतः अप्रतिद्वन्द्वमाहवे होनेसे सर्वातिशायी वैदुष्य वाले आप मात्र हैं।

* श्रीहनुमान्जी का राजनीतिक ज्ञान *

महावीर हनुमान के मुख से शुद्ध वचनों को सुनकर भगवान् श्रीरामचन्द्रजी ने लक्ष्मण से कहा था कि यह वानरराज सुग्रीव के सचिवोत्तम श्रीहनुमान हैं। उनके प्रथम मिलन पर ही श्रीराम ने मुग्ध होकर उनकी प्रशंसा की थी। हनुमान की प्रशंसा करते हुए तथा उनके राजनीतिक गुणों पर प्रकाश डालते भगवान् श्रीरामचन्द्र ने लक्ष्मण से कहा था—

इनकी अद्भुत वाणी को सुनकर वध करने के लिए तलवार उठाये हुए शत्रु का भी हृदय बदल सकता है। जिस राजा के पास इनके समान मन्त्र कुशल दूत न हो, वह कैसे सफल हो सकता है।१

श्रीराम-सुग्रीव के मैत्री स्थापन में श्रीहनुमान का बहुत बड़ा हाथ है। अगर सुग्रीव के पास मन्त्र कुशल, दूरदर्शी, नीतिज्ञ; मेधावी, शूरवीर और राजनीतिज्ञ मन्त्री हनुमान न रहते तो कथमपि अपने खोये हुए राज्य, अपहृत पत्नी तथा उचित सम्मान को सुग्रीव नहीं प्राप्त कर सकते थे। सुग्रीव की मित्रता टूट न जाय इस भय से दोनों के बीच अग्नि की साक्षी बना कर उसने स्थायी मित्रता कायम कर दी।

श्रीहनुमान की राजनीतिक बुद्धि ही सुग्रीव को उपर उठाने में समर्थ हो सकी है। श्रीरामचन्द्रजी ने भी कहा है कि मन्त्रो विजयमूलं हि राज्ञां भवति राघव।२ एक भी मेधावी मन्त्री राजा को पृथ्वी दिलाने में समर्थ हो सकते हैं लेकिन हजारों मूर्ख मन्त्री राजा को उपर नहीं उठा सकते हैं।३

हनुमान की अद्वितीय सूक्ष्म मन्त्रणा के कारण ही श्रीराम ने रावण को अनायास जीत लिया। जब सुग्रीव राज्यगद्दी पाकर सुख भोग में लिप्त होकर श्रीराम के कार्य को भूलने लगता है तो हनुमान अपनी राजनीतिक बुद्धि से उन्हें सचेष्ट करते हैं। वे एक सच्चे हितैषी के रूप में तथा राजनीतिक मन्त्री के रूप में सुग्रीव से निर्भीक होकर कहते हैं-

---

१ वा० रा० ४।३।३३-३५

२ वा० रा० २-१००-१६

३ एकोऽप्यमात्यो मेधावी शूरो दक्षो विचक्षणः।
राजानं राजपुत्रं वा प्रापयेन्महतीं श्रियम् ॥ वा.रा२-१००-२४

नियुक्तैर्मन्त्रिभिर्वाच्यो ह्यवश्यं पार्थिवोहितम् ।
इत एव भयंत्यक्त्वा ब्रवीम्यवधृतं वचः ।। वा.रा. ४-३२-१८

श्रीहनुमानजी ने सुग्रीव को मन्त्रणा पूर्वक श्रीरामकार्य के लिए प्रेरित किया। एक योग्यमन्त्री के समान श्रीहनुमान जी ने सुग्रीव को परामर्श दिया था। उन्होंने सुग्रीव को साम दाम दण्ड और भेद जैसी राजनीति से परिचय कराया। श्रीतुलसी-दासजी ने भी लिखा है—

इहाँ पवन सुत हृदय विचारा। रामकाजु सुग्रीव बिसारा।
निकट जाइ चरनन्हि सिर नावा। चारिहु विधि तेहि कहि समुझावा
(मानस. ४-१८-१)

श्रीहनुमानजी के कहने पर ही सुग्रीव ने वानरों को बुलाया। आदर्शमन्त्री कैसा हो इस विषय में भगवान् श्रीरामने भरत से कहा था—

कश्चिदात्मसमाः शूराः श्रुतवन्तो जितेन्द्रियाः।
कुलीनाश्चेङ्गितज्ञाश्च कृतास्ते तात मन्त्रिणः।।
(वा. रा० २-१००-१५)

वस्तुत राज्यमन्त्री के ये सभी गुण श्रीहनुमानजी में विद्यमान है।

जब रावण का भ्राता विभीषण श्रीराम की शरण में आया तो सुग्रीव, अङ्गद, जाम्बवान् आदि ने उन्हें दण्ड देने या बध करने के लिए श्रीराम को परामर्श दिया, लेकिन सूक्ष्मदर्शी श्रीं हनुमान ने कहा कि विभीषण को विना किसी संकोच के अपने शिविर में शरण दी जाय। वस्तुवः श्रीहनुमान की राजनीतिक बुद्धि के कारण ही विभीषण को अपने साथ रखकर रावण को युद्ध में परास्त करके श्रीरामचन्द्र श्रीसीताजी को पाने में समर्थहुए।

※ संगीतशास्त्र मर्मज्ञ श्रीहनुमान् ※

ज्ञानियों में श्रेष्ठ श्रीहनुमान्जी संगीत शास्त्र के मर्मज्ञ विद्वान् थे। शार्ङ्गदेव ने संगीताचार्यो में श्रीहनुमान्जी का भी नाम लिया है।[१] शारदातनय ने भावप्रकाश में संगीताचार्य आञ्जनेय का नाम लिया है।[२] संगीतरत्नाकर के टीकाकार कल्लिनाथ ने देशी राग के सम्बन्ध में आञ्जनेय मत का उल्लेख इस प्रकार किया है–तथा चाह आञ्जनेय—

येषां श्रुतिस्वरग्रामजात्यादिनियमो नहि।
नानादेशगतिच्छायादेशीरागस्तु ते स्मृताः॥

भरतकोश में श्रीरामकृष्ण कविने लिखा है कि हनुमन्मत से संगीतशास्त्र में अठारह श्रुतियाँ ही स्वीकृत है।

संगीतपारिजात में श्रीहनुमान को ही संगीतशास्त्र के प्रवर्तक माना गया है—

इस ग्रन्थ केभाष्यकार कलिन्द के अनुसार शिवद्वारा बनाया गया संगीतशास्त्र शिवमत भरत का भरतमत और हनुमान का हनुमन्मत के नाम से प्रसिद्ध है—

---

१ सदा शिवः शिवो ब्रह्मा भरतः काश्यपो मुनिः।
मतङ्गो याष्टिको दुर्गा शक्तिः शार्दूलकोहलौ॥
विशाखिलो दन्तिलश्च कम्बलोऽश्वतरस्तथा।
वायुर्विश्वावसू रम्भाऽर्जुनो नारदतुम्बुरु॥
आञ्जनेयो मातृगुप्तो रावणो नन्दिकेश्वरः। (संगीतरत्नाकर)

२ शिल्पाणां भरतस्य यानि च मतान्यध्याप्य तान्यञ्जना—
सूनोरप्यथनाट्यवेदमखिलं सम्यक्तमध्यापयत्।
कर्ता संगीतशास्त्रस्य हनूमांश्च महाकपिः।
शार्दूलकाहलावेतौ संगीतग्रन्थकारिणौ॥ संगीतपारिजात १.९)

शास्त्रं चकार शिवभालविभूषिताङ्गपूर्वं च तच्छिवमतं भरतस्तदन्ते।
तद्भारतं कपिवरश्च विलीलिखद् यत् पश्चादिदं हनुमतो मतमीरितंतद्

भाष्यकार ने मंगलश्लोक में संगीतकार हनुमान् का ही स्मरण किया है—

संगीतेन वशीकरोति वरदंक्ष्माजाधवं राघवम्
यश्चामीकरचारुगात्रसुषमां विस्तारयत्यद्भुताम् ।
नानातालकलाकलापनिपुणः कौशल्यवद् गीयते
स प्रीणातु प्रशस्तगानरसिकव्यामोदिशाखामृगः ॥

अनूप संगीतरत्नाकर में श्रीहनुमानजी को संगीताचार्य के रूप में स्मरण किया गया है—

आञ्जनेयो मातृगुप्तो रावणो नन्दिकेश्वरः ।
स्वातिर्गणो विन्दुराजः क्षेत्रराजश्च काहलः ॥

अतः किसी कवि ने ठीक ही लिखा है—

"संगीताचार्यवर्यं कविकुलतिलकं मारुतिं नौमि वीरम् ।"

एकबार नारद और तुम्बुरु अपनी-अपनी संगीत विद्या की प्रशंसा करते हुए झगड़ने लगे। इन दोनों की विद्या के परीक्षक होने में जब ब्रह्मा-विष्णु-महेश राजी नहीं हुए तो अन्ततोगत्वा दोनों को श्रीहनुमानजी के पास जाना पड़ा ।

श्रीहनुमान जी उस समय श्रीरामजी के ध्यान करने जारहे थे । उन्होंने अपने तपो बल से नारद और तुम्बुरु के पैरों को पहाड़ से चिपका दिया । ये दोनों संगीताचार्य फँस गये। श्री रामजी के ध्यान करने के बाद श्रीहनुमान् ने तुम्बुरु को कहा कि एक संगीत के बलपर तुम दोनों अपने पैर को इस पत्थर से छुड़ा सकते हो। तुम्बुरु ने भरसक प्रयास किया पर उनके गान का कोई असर नहीं हुआ। फिर नारद ने भी गाना गाया परन्तु मात्र उनके पैर हिलडुल रहे थे। तब नारद के द्वारा गाये संगीत

को ही श्रीहनुमान्जी ने गाया और दोनों के पैर पत्थर से अलग हो गये। दोनों को अपने अहंकार का पश्चात्ताप हुआ। वे दोनों संगीतशास्त्रमर्मज्ञ श्रीहनुमान्जी के पैर पर गिर गये।

* श्रीहनुमान् की रामभक्ति *

श्रीहनुमान् की रामभक्ति वर्णनातीत है। हनुमान् की भक्ति के आगे श्रीसीताजी और श्रीलक्ष्मणभी चकित हो जाते थे। जनकतनया श्रीसीताजी भी श्रीहनुमान् की भक्ति की प्रशंसा करती थी। लङ्कादहन के बाद श्रीरामचन्द्रजी ने स्वयं श्रीहनुमान्जी की प्रशंसा की थी—

अहं च रघुवंशश्च लक्ष्मणश्च महाबलः।
वैदेह्या दर्शनेनाद्य धर्मतः परिरक्षिता।
एष सर्वस्वभूतस्तु परिष्वङ्गो हनूमतः।
मया कालमिमं प्राप्य दत्तस्तस्य महात्मनः॥
(वा० रा० ६-१-११, १२)

अर्थात् हे कपिश्रेष्ठ! तुमने जानकी का पता लगा कर, उनका दर्शन कर और उनका समाचार सुनाकर समस्त रघुकुलकी लक्ष्मण की और मेरी धर्मपूर्वक रक्षा की है। तुम्हे प्रसन्न करने के लिए मेरे पास कुछ भी नहीं हैं, इसलिए मैं अपने हृदय लगाकर प्रेमालिङ्गन करके मैं कृतार्थ समझता हूँ।

आगे पुनः श्रीरामचन्द्र ने कहा है कि तुम्हारे एक एक उपकार का बदलो मैं नहीं दे सकता हूँ। तुम्हारा तो मैं चिर-ऋणी रहूंगा। मैं यह नहीं सोचता हूँ कि तुम को कभी मेरे प्रति उपकार की जरुरत पडे—

एकैकस्योपकारस्य प्राणान् दास्यामि ते कपे।
शेषस्येहोपकाराणां भवाम ऋणिनो वयम्॥

मदंगे जीर्णतां यातु यत्त्वयोपकृतं कपे ।
नरः प्रत्युपकाराणामापत्स्वायाति पात्रताम् ॥
वा० रा० ७।४०।२३-२४

अर्थात् आप के एक एक उपकार के लिए मैं प्राण दे सकता हूँ । लेकिन हे हनूमन् ! मैं आपके उपकारों के लिए ऋणी ही रहना चाहता हूँ । मैं नहीं चाहता हूँ कि आपको विपत्ति आवे और मैं सहायता करूँ ।

श्रीराम के कार्यों के लिए भगवान् शङ्कर के वीर्य से हनुमान्जी अवतार लिये थे । श्री तुलसीदासजी ने भी अपने रामचरितमानस में लिखा है—

रामकाज लगि तव अवतारा ।

हनुमानजी को जब लंका में श्रीसीता का पता नहीं लग रहा था तो उसने ध्यान पूर्वक श्रीराम श्रीसीता तथा अन्य देवताओं के लिए वन्दना की थी

नमोऽस्तु रामाय सलक्ष्मणाय देव्यै च तस्यै जनकात्मजायै ।
नमोऽस्तु रुद्रेन्द्रयमानिलेभ्यो नमोऽस्तुचन्द्राग्नि-मरुद्गणेभ्यः ॥

वाल्मीकि रामायण के अनुसार श्रीहनुमान् ने श्रीरामसे विनयपूर्वक कहा था कि हे प्रभो ! मुझे आप के चरण में नित्य स्नेह बना रहे—

स्नेहो मे परमो राजंस्त्वयि तिष्ठतु नित्यदा ।
भक्तिश्च नियतावीर भावो नान्यत्र गच्छतु ॥ वा.रा. ७।४०।१६

श्रीतुलसीदासजी ने भी लिखा है कि श्रीहनूमान् श्रीराम से केवल भक्ति ही मांगते थे—

नाथ भगति अति सुखदायनी ।
देहु कृपा करि अनपायनीं ॥ रा० मा० ५।३३।१

श्रीसुग्रीव और श्रीराम में मैत्री करवानेवाले श्रीहनूमान् ही थे। श्रीविभीषण को प्रसन्न कर श्रीराम से मिलाने में हाथ श्री हनूमान् का ही था। श्री लक्ष्मणजी को मृतसञ्जीवनी लाकर पुनर्जीवित करने का श्रेय श्री हनूमान् को ही है।

श्रीहनुमान् के रोम रोम में श्रीराम वसे हुए हैं। एकबार एक सुन्दर मोती का हार श्रीहनुमान्जी को श्रीसीताजी से मिला श्रीहनुमान् ने उस मोती को चूर चूर कर देखने लगे कि उसमें राम है कि नहीं? उस समय विभीषग ने पूछा कि आपके इस विशाल शरीर में राम है कि नहीं? इस पर हनूमान् ने अपने वक्षस्थल को अपने नखों से फाडकर दिखा दिया जहाँ श्रीराम नाम असंख्य रूप से अंकित थे। यह उनकी श्रीरामभक्ति का ज्वलन्त उदाहरण है।

श्रीहनुमान्जी श्रीराम के ऐसे भक्त हैं कि सामान्य लौकिक कामना की पूर्ति के लिए वे भक्त को कहते हैं कि वे श्रीराम को कष्ट न दें। वे श्रीहनुमान् से ही माँग लें—

नैव योज्यो राममन्त्रः केवलं मोक्षसाधकः।
ऐहिके समनुप्राप्ते मां स्मरेद् रामसेवकम्॥
(रामरहस्योपनिषद् ४-११)

वे राम के भक्तों को अवश्य ही अभीष्ट फल देते हैं—

वाञ्छितार्थं प्रदास्यामि भक्तानां राघवस्य तु।
सर्वदा जागरूकोऽस्मि रामकार्यधुरन्धरः॥
(श्रीरामरहस्योपतिषद् ४.१३)

एक बार श्रीराम ने हनुमान् से काहा कि आप कुछ मुझ से माग लें। इस पर श्रीहनुमानजी ने कहा कि हे प्रभो! मेरा परम स्नेह नित्य आपके पदयुगल में लगा रहे और आप में मेरी अविचल भक्ति वनी रहे और आपसे अतिरिक्त कहीं मेरा अनुराग न हो, यही वरदान मैं चाहता हूँ—

स्नेहो मे परमो राजंस्त्वयि तिष्ठतु नित्यदा ।
भक्तिश्च नियता वीर भावो नान्यत्र गच्छतु ॥
(वा० रा० ७।४०।१६)

श्रीहनुमान्‌जी श्रीराम भक्ति के अतिरिक्त कुछ नहीं चाहते हैं। वे कहते हैं कि अगर मेरा मस्तक किसी अन्य देवता के चरणों में झुके तो मेरे सिर पर प्रचण्ड कालदण्ड का प्रहार हो अगर उनकी जिह्वा अन्य देवता के मन्त्र का उच्चारण करे तो उसे सर्प डस ले। अगर उनके हृदय में श्रीराम से अतिरिक्त अन्य देवता का स्थान हो तो उस पर भयंकर वज्र का प्रहार हो जाय—

रामादन्यं नमेच्चेत् पततु शिरसि मे कालदण्डः प्रचण्डः
जिह्वामेतां द्विजिह्वो दशतु रघुपतेर्नामतोऽन्यं जपेच्चेत् ।
दम्भोलिर्मामकीनं विदलतु हृदयं चिन्तयेच्चेत्ततोऽन्यं
जानीते सर्ववेत्ता सकलहृदिगतो वेत्तिनान्योनवेत्तु ॥

इसलिए श्रीरामायणरसायन में श्रीहनुमान्‌जी के विषय में कहा गया है कि उनके मन, जिह्वा, आँखे तथा अन्य इन्द्रियाँ भी श्रीराम नाम में ही लगी हुई है—

सीतारामपदाम्बुजे मधुपवद् यत्मानसं लीयते
सीतारामगुणावली निशिदिवा यज्जिह्वया पीयते ।
सीतारामविचित्ररूपमनिशं यच्चक्षुषोभूषणम्
सीतारामसुनामधामनिरतं तं सद्‌गुरुं सम्भजे ॥

श्रीहनुमान्‌जी ने श्रीराम की पदसेवा में अपना सम्पूर्ण जीवन विताया है। पूरा जीवन ही नहीं, जन्म जन्मान्तर भर वह श्रीराम कृपा की छाया में रहा है—

नाथ एक वर मागउँ राम कृपा करि देहु ।
जन्म जन्म प्रभु पद कमल कबहुँ घटे जनि नेहु ॥
रा०मा० उत्तर ४९

अञ्जनि पुत्र श्रीहनूमान्जी श्रीराम के सबसे बडे भक्त थे। श्रीहनूमान् ने अपनी छाती फाड कर दिखला दिया था कि श्रीरामचन्द्रजी उनके हृदय में विराजमान हैं। श्रीरामचन्द्रजी का जहाँ कहीं भी कीर्तन होता है वहाँ श्रीहनूमान्जी अवश्य रहते हैं। इसलिए कहा गया है—

यत्र यत्र रघुनाथकीर्तनं तत्र तत्र कृतमस्तकाञ्जलिम्।
बाष्पवारिपरिपूर्णलोचनं मारुतिं नमत राक्षसान्तकम्॥

श्रीहनूमान्जी भरत के ही समान प्रिय थे ऐसा श्रीतुलसीदासजी ने लिखा है—

"तुम मम प्रिय भरतहि सम भाई।"

सुग्रीव के सचिव तथा दूत के रूप में जब पहली भेंट श्रीरामजी से होती है तो श्रीरामजी उनसे बहुत ही प्रभावित होते हैं। श्रीहनुमान् ने प्रभु को पहचान कर चरण पकड़ लिया—

प्रभु पहचानि परेउ गहि चरना। रा० मा० किष्किन्धा १०।२

उन्हें श्रीरामजी काज के विना विश्राम नहीं होता है—

राम काजु कीन्हे बिनु, मोहि कहाँ विश्राम। (रा.मा. सुन्दरकाण्ड)

इस प्रकार श्रीहनुमानजी श्रीरामजी के अनन्य भक्त हैं यह स्पष्ट है।

* श्रीहनुमान् का पराक्रम *

श्रीहनुमान् बहुत ही बलशाली थे। रावण और वाली भी उनके सामने कम बलवाले थे। श्रीरामचन्द्रजी ने स्वयं इनकी प्रशंसा करते हुए कहा है—

अतुलं बलमेतद् वै वालिनो रावणस्य च।
नत्वेताभ्यां हनुमता समं त्विति मतिर्मम॥ वा. रा. ७।३५।२

अर्थात् रावण और बाली बहुत बलशाली अवश्य थे परन्तु वे दोनों हनुमान् की बराबरी नहीं कर सकते। इस पर महर्षि अगस्त्य ने भी कहा—

सत्यमेतद्रघुश्रेष्ठ यद् ब्रवीषि हनूमति ।
न बले विद्यते तुल्यो न गतौ न मतौ परः ॥
वा० रा० ७।३५।१५

अर्थात् हे राघवेन्द्र! आपने जो कहा है वह बिल्कुल ही ठीक है। बल, बुद्धि और गति में हनुमान् की तुलना किसी दूसरे से नहीं हो सकती है।

श्रीहनुमान् में शौर्य, दक्षता, बल, धैर्य, बुद्धि, नीति, पराक्रम और प्रभाव ये सब गुण विद्यमान हैं। श्रीवाल्मीकि ने भी लिखा है–

शौर्यं दाक्ष्यं बलं धैर्यं प्राज्ञता नयसाधनम् ।
विक्रमश्च प्रभावश्च हनूमति कृतालयाः ॥ वा. रा. ७।३५।३

श्रीहनुमान्‌जी की गर्जना सुनकर राक्षस–पत्नियों के गर्भ गिर गये–

चलत महाधुनि गर्जेसि भारी ।
गर्भ स्रवहिं सुनि निसिचर नारी ॥ रा० मा० ५।२७।१

श्रीतुलसीदासजी ने भी श्रीहनुमान्‌जी को अतुलित बल का धाम कहा है–

रामदूत अतुलित बलधामा । अंजनि पुत्र पवन सुत नामा ॥

श्रीहनुमान्‌जी का शरीर वज्र का बना हुआ है–

वज्र देह दानव दलन जय जय जय कपि सूर ॥

महाभारत के वनपर्व में श्रीहनुमान्‌जी के विशाल शरीर का वर्णन इस प्रकार है–

समुच्छ्रितमहाकायो द्वितीय इव पर्वतः ।
ताम्रेक्षणस्तीक्ष्णदंष्ट्रो भृकुटीकुटिलाननः ॥ म० वन० १५०।५

अर्थात् उनका विशाल शरीर पर्वत के समान था। उनके नेत्र लाल थे। भृकुटियाँ टेढी थीं।

लङ्कादहन करनेवाले श्रीहनुमान् के बल के विषय में श्री तुलसीदासजी ने कहा है–

पवन-तनय बल पवत समाना । बुद्धि-विवेक विग्यान निधाना।

श्रीहनुमान्जी को अपने वल का स्मरण जब हो जाता है तो वह समुद्रलंघन भी आसानी से कर लेते हैं। सुरसा द्वारा परीक्षा में भी हनुमान्जी सफल निकले। अशोक वाटिका का विध्वंस करना, लङ्कालहन करना तथा पहाड उठाकर लक्ष्मणजी को जिन्दा करना श्रीहनुमान् पराक्रम का परिचायक है।

श्रीराम और लक्ष्मण की पातालपुरी में जाकर ढूढ लेना, अहिरावण को मार डालना और पुनः उन दोनों को अपने कन्धे पर चढाकर ले आना श्रीहनुमान्जी के पराक्रम का बहुत वड़ा उदाहरण है।

* चिरञ्जीवी हनुमान् *

श्रीहनुमान्जी सात चिरञ्जीवियों में एक हैं अर्थात् उनकी अमरता है। वे अभी भी जीवित हैं। कहा भी गया है—

अश्वत्थामा वलिर्व्यासो हनुमान् च विभीषणः।
कृपः परशुरामश्च सप्तैते चिरजीविनः।

अर्थात् अश्वत्थामा, वलि, व्यास, हनुमान्, विभीषण, कृपाचार्य, और परशुराम ये सात चिरजीवी हैं।

इस बात की पुष्टि वाल्मीकि के रामायण में भी की गयी है। श्रीरामचन्द्रजी के मुँख से अनायास ही निकल पड़ा—

मारुते त्वं चिरंजीव ममाज्ञा मा मृषा कृथाः। वा.रा. ७।९।३५

श्रीसीताजी ने भी उन्हें वरदान में कहा—

"अजर अमर गुणनिधि सुत होहू।"

जव श्रीरामचन्द्रजी अयोध्या लौटने लगे तो उन्होंने अपने भक्त हनूमान् पर प्रसन्न होकर कहा—

मत्कथाः प्रचरिष्यन्ति यावल्लोके हरीश्वर।
तावद्रमस्व सुप्रीतो मद्वाक्यमनुपालयन्॥ वा. रा. ७।१०८।३३

अर्थात् हे कपिश्रेष्ठ श्रीहनुमान् ! जबतक इस पृथ्वी पर मेरी कथा होती रहेगी, तबतक तुम मेरे आदेश का पालन करते हुए प्रीतिपूर्वक भ्रमण करते रहो ।

कल्प के अन्त होने पर उन्हें भगवान् श्रीराम में सायुज्य होने का भी वरदान दिया है–

कल्पान्ते मम सायुज्यं प्राप्यसे नात्र संशयः ।। वा.रा. ६।१६।१५

गर्ग संहिता के अनुसार भगवान् श्रीराम का दर्शन हनुमान् नित्य ही करते हैं और वे चिरकाल तक रहनेवाले हैं–

अत्र नित्यं हि हनुमानार्ष्टिषेणेन रागिणा ।
दर्शनार्थं समायाति महात्मा रामपूजकः ।। ग. सं. २६।२६

इस प्रकार श्रीहनुमान्‌जी चिरञ्जीवी भक्त सिद्ध होते हैं ।

※ भक्तों के उपर अनुग्रह ※

श्रीहनुमान्‌जी प्रत्येक युग में भक्तों को अपने विराट रूप का दर्शन कराते रहते हैं । द्वापर में गन्धमादन पर्वत पर कद' लीवन में विचरण करते हुए भीमसेन को हनुमान् का दर्शन हुआ था । उनका मंगलमय स्वरूप श्रीतुलसीदासजी के शब्दों में इस प्रकार है–

स्वर्न सैल संकास कोटि रवि तरुन तेज वन ।
उर बिसाल भुजदण्ड चंड नख वज्र बज्र तन ।।
पिंग नयन भृकुटी कराल रसना दसनानन ।
कपि सकेस कर कस लंगूर खल दल बल भावन ।
कह तुलसिदास बसु जासु उर मारुतसुत मूरति बिकट ।
संताप पाप तेहि पुरुष पहि सपनेहुं नहि आवत निकट ।।

सन्त श्रीरामदास को श्रीहनुमान्‌जी का दर्शन हुआ था । श्रीहनुमान्‌जी सहृदयता की साकार प्रतिया हैं । वे अपने भक्तों में अटल विश्वास और साहस भरते हैं । स्वयं भी उन्होंने कहा था–

राम काज कीन्हे बिनु मोहि कहाँ विश्राम ।

वे भक्तों में एक विचित्र उत्साह भर देते हैं । हनुमान् जी भक्तों में आदर्श जीवन की लहरें पैदा करते रहते हैं ।

* संक्षिप्त पूजाविधान *

श्रीहनुमान्जी की पूजा का विधान बहुत ही आसान है । उनकी मूर्ति या चित्र को किसी पवित्र स्थल में चौकी पर रेशमी वस्त्र बिछाकर सामने रख लें । अपने हाथ-पैर तथा मुँख का प्रक्षालन करके श्रीहनुमान्जी का अवाहन करें । पूजा करनेवाला उपासक पूर्व की ओर मुँख करके बैठे। वे किसी पवित्र आसन पर बैठकर श्रीरामचन्द्र की पूजा तथा उनके परिवार के श्रीसीताजी तथा लक्ष्मण, आदिकी पूजा करलें । फिर श्रीहनुमान्जी की पूजा करें । जप के लिए तुलसी या रुद्राक्ष चन्दन आदि की माला ले सकते हैं पर श्रेष्ठता तुलसीमाला में है लक्ष्यानुसार पूजा के लिए चन्दन, अक्षत, सिन्दूर, पुष्प, पान, सुपारी, दुर्वादल, धूप, दीप, माला, जल कलश, मेवा, पञ्चगव्य. पञ्चामृत, लालवस्त्र, नैवेद्य आदि रहना जरूरी है।

पूजा करने के बाद रामायण का थोड़ा भी पाठ जरूरी है। पूजा का प्रारम्भ इस प्रकार से करें—

ॐ अयोध्यानगरे रम्ये रत्नमण्डपमध्यगे ।
ध्यायेत्कल्पतरोर्मूले रत्नसिंहासनं शुभम् ॥
तस्योपरि समासीनं रघुराजं मनोहरम् ।
ध्यायेत्कमलपत्राक्षं जानकीसहितं हरिम् ॥

पुनः श्रीहनुमान्जी का ध्यान इस प्रकार करें—

ॐ ध्यायेद्बालदिवाकरं द्युतिनिभं देवारिदर्पापहं
देवेन्द्रप्रमुखप्रशस्तयशसं देदीप्यमानं रुचा ।
सुग्रीवादिसमस्तवानरयुतं सुव्यक्ततत्त्वप्रियम्
संरक्तारुणलोचनं पवनजं पीताम्बरालंकृतम् ॥

गुरु का स्मरण करके पुनः श्रीगणेश पूजन करें। फिर श्रीरामजी का पूजन करें।

आगच्छ जानकीनाथ ! जानक्या सह राघव ।
गृहाण मम पूजां च वायुपुत्रादिभिर्युतः ॥

फिर श्रीहनुमान्जी का ध्यान निम्नरूपसे करके

बालार्कायुततेजसं त्रिभुवनप्रक्षोभकं सुन्दरम्
सुग्रीवादिसमस्तवानरगणैराराधितं साञ्जनिम् ।
नादेनैव समस्तराक्षसगणान् संत्रासयन्तं प्रभुं
श्रीमद्रामपदाम्बुजस्मृतिरतं ध्यायामि वातात्मजम् ॥

ॐ मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् ।
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये ॥

इस मन्त्रसे आवाहन करें—

ॐ श्रीरामचरणाम्भोजयुगलस्थिरमानसम्
आवाहयामि वरदं हनूमन्तमभीस्टदम् ॥

इस प्रकार आवाहन कर प्रत्येक वस्तु के अन्त में "समर्पयामि" यानी 'पाद्यंसमर्पयामि' इस तरह बोलते हुये पाद्य, आचमन, जलस्नान दुग्धस्नान, दधिस्नान, मधुस्नान, शर्करास्नान, पञ्चामृतस्नान, शुद्धोदकस्नान कराकर सिन्दूर समर्पण, कटिसूत्र समर्पण, कौपीन समर्पण, उत्तरीय समर्पण, आभरण समर्पण, यज्ञोपवीत समर्पण, कर गन्ध अक्षत पुष्प, पुष्पमाल्य, दूर्वा, तुलसीदल, धूप, दीप, नैवेद्य, पानीय, ऋतुफल आदि समर्पित करें। ताम्बूल, पुङ्गीफल, समर्पित कर दक्षिणादान करें। नीराजन करें। पुष्पाञ्जलि समर्पित कर अन्त में निम्न मन्त्र को बोलते हुये नमस्कार करें—

वायुपुत्राय वीराय आकाशोदरगामिने ।
वनपालशिरच्छेदलंकाप्रासादभंजिने ॥
नमो वानरवीराय सुग्रीवसख्यकारिणे ।
सीताशोकविनाशाय राममुद्राधराय च ॥

फिर क्षमाप्रार्थना करें-

मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं कपीश्वर ?।
यत्पूजितं मया देव ? परिपूर्णं तदस्तु मे ।।

* श्रीहनुमत्-त्रिकाल-स्मरणम् *

प्रातः स्मरामि हनुमन्तमनन्तवीर्यं श्रीरामचन्द्रचरणाम्बुजचञ्चरीकम् ।
लङ्कापुरीदहननन्दितदेववृन्दं सर्वार्थसिद्धिसदनं प्रथितप्रभावम् ।।१।।
माध्यं नमामि वृजिनार्णवतारणैकाधारं शरण्यमुदितानुपमप्रभावम् ।
सीताऽधिसिन्धुपरिशोषणकर्मदक्षं वन्दारुकल्पतरुमव्ययमाञ्जनेयम् ।।
सायं भजामि शरणोपसृताखिलार्ति
पुञ्जप्रणाशनविधौ प्रथितप्रतापम् ।
अक्षान्तकं सकलराक्षसवंशधूम-
केतुं प्रमोदितविदेहसुतं दयालुम ।।३।।

* श्रीहनुमत्स्मरणम् *

सीतारामपदाम्बुजे मधुपवद् यन्मानसं लीयते,
सीतारामगुणावली निशिदिवा यज्जिह्वया पीयते ।
सीतारामविचित्ररूपमनिशं यच्चक्षुषोर्भूषणम्
सीतारामसुनामधामनिरतं तं मारुतिं सम्भजे ।।(श्रीरामायण रसायन)
अतुलितबलधामं हेमशैलाभदेहं
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम् ।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं
रघुपतिप्रियभक्तं वातजातं नमामि ।। (रामचरितमानस ५-३)

ॐ दाशरथाय विद्महे सीतावल्लभाय धीमहि तन्नो रामः प्रचोदयात्।
ॐ अञ्जनीजाय विद्महे वायुपुत्राय धीमहि तन्नो हनुमान्
प्रचोदयात् ।। (मन्त्रमहार्णव)
ॐ तव श्रिये मरुतो मर्जयन्त रुद्रयत्तो जनिम चारुचित्रम् ।
पदं यद् विष्णोरुपमं निधायि तेन पासि गुह्यं नाम गोनाम्।
(ऋक् संहिता ५-३३)

* श्रीआञ्जनेय स्तुतिः *

गोष्पदीकृतवाराशिं मशकीकृतराक्षसम् ।
रामायणमहामालारत्नं वन्देऽनिलात्मजम् ॥१

अञ्जनानन्दनं वीरं जानकीशोकनाशनम् ।
कपीशमक्षहन्तारं वन्दे लङ्काभयङ्करम् ॥२

उल्लङ्घ्यसिन्धोः सलिलं सलीलं
यः शोकवह्निं जनकात्मजायाः ।
आदाय तेनैव ददाह लङ्कां
नमामि तं प्राञ्जलिराञ्जनेयम् ॥३

आञ्जनेयमतिपाटलाननं
काञ्चनाद्रिकमनीय विग्रहम् ।
पारिजाततरुमूलवासिनं
भावयामि पवमाननन्दनम् ॥४

यत्र यत्र रघुनाथकीर्तनं
तत्र तत्र कृतमस्तकाञ्जलिम् ।
वाष्पवारिपरिपूर्णलोचनं
मारुतिं नमतराक्षसान्तकम् ॥५

मनोजवं मारुततुल्यवेगं
जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् ।
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं
श्रीरामदूतं शिरसा नमामि ॥६

* आञ्जनेय पञ्चश्लोकीस्तोत्रम् *

वन्दे प्रतापनिलयं कनकाचलाभम
साक्षात्कृतान्तमशिवं समरेऽसुराणाम् ।
वातात्मजं परमसुन्दरमाञ्जनेयम्
श्रीरामभक्तमतुलं नकुलस्य तेजः ॥१॥

तं राक्षसक्षयकरं पवनप्रसूतम्
रामे रतं प्रतिलवं मनसोऽपि शीघ्रम् ।
भीमं पराक्रमकरं भुवि कीर्तनीयम्
भीमाग्रजं पशुपतिं हनुमन्तमीडे ॥२॥
दुष्टान् दलत्युपकरोति सदाऽतिभक्तान्
इष्टं प्रपूर्य मतिमान् भगवान् कपीशः ।
कष्टं विनाश्य भवसागरपारकर्ता
हर्ता जनार्ति सकलस्य प्रभुः शरण्यः ॥३॥
अक्षान्तकः परमसूक्ष्मविचारदक्षः
रक्षोगणस्य हनने च सदैकलक्ष्यः ।
सन्तापशोकहरणेऽस्ति स्वभक्तपक्षः
रक्षां करोतु विपुलं स तु सूर्यभक्षः ॥४॥
भूतात् पिशाचभयतश्च निवारणाय
दारिद्र्यकष्टहरणे दमने खलानाम् ।
सर्वार्थसिद्धिजनने विचये च युद्धे
नूनं प्लवङ्गप्रवरस्य नुतिर्नराणाम् ॥५॥
पञ्चश्लोकमितं पुण्यं वायुसूनोः हनूमतः ।
भक्त्या कृतं महः स्तोत्रमुमारमणशर्मणा ॥

※ श्रीहनुमदष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् ※

आञ्जनेयो महवीरो हनुमान् मरुतात्मजः ।
तत्त्वज्ञानप्रदः सातादेवींमुद्राप्रदायकः ॥१॥
अशोकवनिकाच्छेता सर्वमायाविभञ्जनः ।
सर्वबन्धविमोक्ता च रक्षो विध्वंसकारकः ॥२
परविद्या परीहारः परशौर्यविनाशनः ।
परमन्त्रनिराकर्ता परयन्त्रप्रभेदकः ॥३
सर्वग्रहविनाशी च भीमसेन सहायकृत् ।
सर्वदुःखहरः सर्वलोकचारी मनोजवः ॥४

पारिजातद्रुमूलस्थः सर्वमन्त्रस्वरूपवान् ।
सर्वतन्त्रस्वरूपी च सर्वयन्त्रात्मकस्तथा ॥५
कपीश्वरो महाकाव्यः सर्वरोगहरः प्रभुः ।
फलसिद्धिकरः सर्वविद्यासम्पत्प्रदायकः ॥६
कपिसेनानायकश्च भविष्यच्चतुराननः ।
कुमारब्रह्मचारी च रत्नकुण्डलदीप्तिमान् ॥७
सञ्चलद्वालसन्नद्धलम्बमानशिखोज्ज्वलः ।
गन्धर्वविद्यातत्त्वज्ञो महाबलपराक्रमः ॥८
कारागृहविमोक्ता च शृङ्खलाबन्धमोचकः ।
सागरोत्तारकः प्राज्ञो रामदूतः प्रतापवान् ॥९
वानरः केसरिसुतः सीताशोकनिवारणः ।
अञ्जनागर्भसंभूतो बालार्कसदृशाननः ॥१०
विभीषणप्रियकरो दशग्रीवकुलान्तकः ।
लक्ष्मणप्राणदाता च वज्रकायो महाद्युतिः ॥११
चिरंजीवी रामभक्तो दैत्यकार्यविघातकः ।
अक्षहन्ता काञ्चनाभः पञ्चवक्त्रोमहातपाः ॥१२
लङ्किणीभंजनः श्रीमान् सिंहिकाप्राणभंजनः ।
गन्धमादनशैलस्थो लङ्कापुरविदाहकः ॥१३
सुग्रीवसचिवो धीरः शूरो दैत्यकुलान्तकः ।
सुरार्चितो महातेजाः रामचूणामणिप्रदः ॥१४
कामरूपीपिङ्गलाक्षो वार्धिमैनाकपूजितः ।
कवलीकृतमार्तण्ड मण्डलो विजितेन्द्रियः ॥१५
रामसुग्रीवसन्धाता महारावणमर्दनः ।
स्फटिकाभो वागधीशो नवव्याकृतिपण्डितः ॥१६
चतुर्बाहुर्दीनबन्धुः महात्मा भक्तवत्सलः ।
संजीवननगाहर्ता शुचिर्वाग्मी दृढव्रतः ॥१७
कालनेमिप्रमथनो हरिर्मर्कटमर्कटः ।
दान्तः शान्तः प्रसन्नात्मा शतकण्ठमदापहृत् ॥१८

योगीरामकथालोलः सीतान्वेषणपण्डितः ।
वज्रदंष्ट्रो वज्रनखो रुद्रवीर्यसमुद्भवः ॥१९
इन्द्रजित्प्रहितामोघ ब्रह्मास्त्रविनिवारकः ।
पार्थध्वजाग्रसंवासी शरपंजरभेदकः ॥२०
दशबाहुर्लोकपूज्यो जाम्बवत्प्रीतिवर्धनः ।
सीतासमेतश्रीरामपादसेवाधुरन्धरः ॥२१
इत्येवं श्रीहनुमतो नाम्नामष्टोत्तरंशतम् ।
यः पठेच्छृणुयान्नित्यं सर्वान् कामानवाप्नुयात् ॥२२
असाध्यसाधकस्वामिन् असाध्यं तव किं वद ।
रामदूत? कृपासिन्धो मत्कार्यं साधय प्रभो ॥२३
॥ इति श्रीहनुमदष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं समाप्तम् ॥

* श्रीहनुमदष्टोत्तरशतनामावलिः *

ॐ आञ्जनेयाय नमः; ॐ महावीराय नमः; ॐ हनुमते नमः; ॐ मारुतात्मजाय नमः ॐ तत्त्वज्ञानप्रदाय नमः; ॐ सीतादेवीमुद्राप्रदायकाय नमः; ॐ अशोकवनिकाच्छेत्रे नमः; ॐ मायाविभञ्जनाय नमः; ॐ सर्वबन्धविमोक्त्रे नमः; ॐ रक्षोविध्वंसकारकाय नमः; ॐ परविद्यापरीहाराय नमः, ॐ परशौर्यविनाशाय नमः; ॐ परमन्त्रनिराकर्त्रे नमः, ॐ भीमसेनसहायकृते नमः; ॐ सर्वदुःखहराय नमः, ॐ सर्वलोकचारिणे नमः, ॐ मनोजवाय नमः; ॐ पारिजातद्रुममूलस्थाय नमः॰ ॐ सर्वयन्त्रात्मकाय नमः; ॐ कपीश्वरायनमः, ॐ महाकालाय नमः, ॐ कपीश्वरायनमः, ॐ महाकायाय नमः ॐ सर्वरोगहराय नमः; ॐ प्रभवे नमः, ॐ फलसिद्धिकराय नमः; ॐ सर्वविद्यासम्पत्प्रदापकाय नमः, ॐ कपिसेनानायकाय नमः; ॐ भविष्यच्चतुराननाय नमः, ॐ कुमारब्रह्मचारिणे नमः, ॐ रत्नकुण्डलदीप्तिमते नमः; ॐ सञ्चलद्वालसंनद्धलम्बमानशिखोज्ज्वलाय नमः; ॐ गन्धर्वविद्यातत्त्वज्ञाय नमः; ॐ महाबलपराक्रमाय नमः; ॐ कारागृहवि-

मोक्त्रे नमः; ॐ शृङ्खलाबन्धमोचकाय नमः; ॐ सागरोत्तारकाय नमः; ॐ प्राज्ञायनमः; ॐ रामदूताय नमः. ॐ प्रतापवते नमः, ॐ वानराय नमः; ॐ केसरिसुताय नमः; ॐ सीताशोकनिवारणाय नमः; ॐ अञ्जनागर्भसम्भूताय नमः, ॐ बालार्कसदृशाननाय नमः; ॐ विभीषणप्रियकराय नमः; ॐ दशग्रीवकुलान्तकाय नमः; ॐ लक्ष्मणप्राणदात्रे नमः; ॐ वज्रकायाय नमः; ॐ महाद्युतये नमः; ॐ चिरजीविने नमः; ॐ रामभक्ताय नमः; ॐ दैत्यकार्यविघाताय नमः; ॐ अक्षहन्त्रे नमः; ॐ काञ्चनाभाय नमः; ॐ पञ्चवक्त्राय नमः; ॐ महातपसे नमः; ॐ लङ्किणीभंजनाय नमः, ॐ श्रीमते नमः; ॐ सिंहिकाप्राणभंजनाय नमः ॐ गन्धमादनशैलस्थाय नम; ॐ लङ्कापुरविदाहकाय नमः; ॐ सुग्रीवसचिवाय नमः, ॐ धीराय नमः; ॐ शूराय नमः; ॐ दैत्यकुलान्तकाय नमः; ॐ सुरार्चिताय नमः; ॐ महातेजसे नमः; ॐ रामचूडामणिप्रदाय नमः; ॐ कामरूपिणे नमः; ॐ पिङ्गलाक्षाय नमः; ॐ वार्धिमैनाकपूजिताय नमः; ॐ कबलीकृतमार्तण्डमण्डलाय नमः; ॐ विजितेन्द्रियाय नमः; ॐ रामसुग्रीवसन्धात्रे नमः; ॐ महारावणमर्दनाय नमः; ॐ स्फटिकाभाय नमः; ॐ वागधीशाय नमः; ॐ नवव्याकृतिपण्डिताय नमः; ॐ चतुर्बाहवे नमः; ॐ दीनबन्धवे नमः; ॐ महात्मने नमः; ॐ भक्तवत्सलाय नमः; ॐ संजीवननागहर्त्रे नमः; ॐ शुचये नमः; ॐ वाग्मिने नमः; ॐ दृढव्रताय नमः; ॐ कालनेमिप्रमथनाय नमः ॐ हरिमर्कटमर्कटाय नमः; ॐ दान्ताय नमः; ॐ शान्ताय नमः ॐ प्रसन्नात्मने नमः; ॐ शतकण्ठमदापहृते नमः; ॐ योगिने नमः; ॐ रामकथालोलाय नमः; ॐ सीतान्वेषणपण्डिताय नमः ॐ वज्रदंष्ट्राय नमः; ॐ रुद्रवीर्यसमुद्भवाय नमः; ॐ इन्द्रजित् प्रहितामोघब्रह्मास्त्रविनिवारकाय नमः; ॐ पार्थध्वजाग्रसंवासिने नमः; ॐ शरपंजरभेदकाय नमः; ॐ दशबाहवे नमः; ॐ लोकपूज्याय नमः; ॐ जाम्बवत्प्रीतिवर्धनाय नमः ॐ सीतसमेतश्रीरामपादसेवाधुरन्धराय नमः ।

॥ इति श्रीहनुमदष्टोत्तरशतनामावलिः समाप्ता ॥

* एकादशमुखहनुमत्कवचम् *

श्रीरामाय नमः

लोपामुद्रा उवाच

कुम्भोद्भव दयासिन्धो श्रुतं हनुमतः परम् ।
यन्त्रमन्त्रादिकं सर्वं त्वन्मुखोदीरितं मया ॥१॥

दयां कुरु मयि प्राणनाथ वेदितुमुत्सहे ।
कवचं वायुपुत्रस्य एकादशमुखात्मनः ॥२

इत्येवं वचनं श्रुत्वा प्रियायाः प्रश्रयान्वितम् ।
वक्तुं प्रचक्रमे तत्र लोपामुद्रां प्रतिप्रभुः ॥३॥

अगस्त्य उवाच

नमस्कृत्वारामदूतं हनूमन्तं महामतिम् ।
ब्रह्मप्रोक्तं तु कवचं शृणु सुन्दरि सादरम् ॥४॥

सनन्दनाय सुमहच्चतुराननभाषितम् ।
कवचं कामदंदिव्यं रक्षः कुलनिवर्हणम ॥५॥

सर्वसंपत्प्रदंपुण्यं मर्त्यानां मधुरस्वरे ।
अस्य श्रीकवचस्यैकादशवक्त्रस्य धीमतः ॥६॥

हनूमत्स्तुतिमन्त्रस्य सनन्दन ऋषिः स्मृतः ।
प्रसन्नात्मा हनूमांश्च देवता परिकीर्तिता ॥७॥

छन्दोऽनुष्टुप् समाख्यातं बीजं वायुसुतस्तथा ।
मुख्यः प्राणः शक्तिरिति विनियोगः प्रकीर्तितः।८

सर्वकामार्थसिध्यर्थं जप एवमुदीरयेत् ।
ॐ स्फ्रें बीजं शक्तिधृक् पातुशिरोमे पवनात्मानः ॥

क्रौं बीजात्मा नयनयोः पातु मां वानरेश्वरः ।
क्षं बीजरूपः कर्णो मे सीताशोकविनाशनः ॥१०॥

ग्लौं बीजवाच्यो नासां मे लक्ष्मणप्राणदायकः ।
वं बीजार्थश्च कण्ठं मे पातु चाक्षयकारकः ॥११॥

रां बीजवाच्यो हृदयं पातु मे कपिनायकः ।
वं बीजकीर्तितः पातु बाहू मे चांजनीसुतः ॥१२॥

ह्रीं बीजो राक्षसेन्द्रस्य दर्पहा पातु चोदरम् ।
हसौं बीजमयो मध्यं पातुलङ्काविदाहकः ॥१३॥

ॐ ह्रीं बीजधरः पातु गुह्यं देवेन्द्रवन्दितः ।
रं बीजात्मा सदा पातु चोरु मे वार्धिलङ्घनः ॥१४॥

सुग्रीवसचिवः पातु जानुनी मे मनोजवः ।
पादौ पादतले पातु द्रोणाचलधरो हरिः ॥१५॥

आपाद मस्तकं पातु रामदूतो महाबलः ।
पूर्वे वानरवक्त्रो मामाग्नेय्यां क्षत्रियान्तकृत् ॥१६॥

दक्षिणे नारसिंहस्तु नैऋत्यां गणनायकः ।
वारुण्यां दिशि मामव्यात्खगवक्त्रो हरीश्वरः ॥१७॥

वायव्यां भैरवमुखः कौबेर्य्यां पातु मां सदा ।
कोल्यासः पातु मां नित्यमैशान्यां रुद्ररूपधृक् ॥१८॥

ऊर्ध्वं हयाननः पातु गुह्याधः सुमुखस्तथा ।
रामास्यः पातु सर्वत्र सौम्यरूपो महाभुजः ॥१९॥

इत्येवं रामदूतस्य कवचं यः पठेत्सदा ।
एकादशमुखस्यैतद्गोप्यं ते कीर्तितं मया ॥२०॥

रक्षोघ्नं कामदं सौम्यं सर्वसंपद्विधायकम् ।
पुत्रदं धनदं चोग्रशत्रुसंघविमर्दनम ॥२१॥

स्वर्गापवर्गदंदिव्यं चिन्तितार्थप्रदं शुभम् ।
एतत्कवचमज्ञात्वा मन्त्रसिद्धिर्न जायते ॥२२॥

चत्वारिंशत्सहस्राणि पठेच्छुद्धात्मकोनरः ।
एकवारं पठेन्नित्यं कवचं सिद्धिदं पुमान् ॥२३॥

द्विवारं वा त्रिवारं वा पठन्नायुष्यमाप्नुयात् ।
क्रमादेकादशादेवमावर्तनजपात्सुधीः ॥२४॥

वर्षान्ते दर्शनं साक्षाल्लभते नात्र संशयः ।
यं यं चिन्तयते चार्थं तं तं प्राप्नोति पुरुषः ॥२५॥

ब्रह्मोदीरितमेतद्धि तवाग्रे कथितं महत् ।
इत्येवमुक्त्वावचनं महर्षिस्तूष्णीं बभूवेन्दुमुखीं निरीक्ष्य ॥२६
संहृष्टचित्तापि तदातदीयपादौ ननामातिमुदा स्वभर्तुः ।

अथ मन्त्र—
ओं स्फ्रें क्रौं क्ष्रौं ग्लौं वं रां वां ह्रौं ह्रीं रं ।
स्फ्रें क्रौं क्ष्रौं ग्लौं क्ष्रीं क्ष्रौं हुं हां ह्लौं ह्रीं रं ॥

॥ इत्यगस्त्यसारसंहितायामेकादशमुखहनुमत्कवचं सम्पूर्णम् ॥

※ पञ्चमुखहनुमत्कवचम् ※

ॐ अस्य श्रीपञ्चमुखहनुमत्कवचमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः गायत्री छन्दः पञ्चमुखविराट्हनुमान् देवता ह्रीं बीजं श्रीं शक्तिः१ क्रौं कीलकम् क्रूं कवचम् । क्रैं अस्त्राय फट् । इति दिग्बन्धः ।

श्री गरुड उवाच

अथ ध्यानं प्रवक्ष्यामि शृणु सर्वाङ्ग सुन्दरि ।
यत्कृतं देवदेवेन ध्यानं हनुमतः प्रियम ॥१॥

पञ्चवक्त्रं महाभीमं कपियूथसमन्वितम् ।
वाहुभिर्दशभिर्युक्तं सर्वकामार्थसिद्धिदम् ॥२॥

पूर्वं तु वानरं वक्त्रं कोटिसूर्यसमप्रभम् ।
दंष्ट्राकरालवदनं भ्रुकुटीकुटिलेक्षणम् ॥३॥

अस्यैव दक्षिणं वक्त्रं नारसिंहं महाद्भूतम् ।
अत्युग्रतेजोवपुषं भीषणं भयनाशनम् ॥४॥

१ रां बीजं यं शक्तिः पाठ कुत्रचित्

पश्चिमे गारुडं वक्त्रं वक्त्रतुण्डं महाबलम् ।
सर्वनागप्रशमनं सर्वभूतादि कृन्तनम् ॥५॥

उत्तरे सौकरं वक्त्रं कृष्णं दीप्तं नभोपमम् ।
पातालसिंहवेतालज्वररोगादिकृन्तनम् ॥६॥

ऊर्ध्वं हयाननं घोरं दानवान्तकरं परम् ।
येन वक्त्रेण विप्रेन्द्र तारकाख्यं महासुरम् ॥७॥

जघान शरणं तत्स्यात्सर्वशत्रुहरं परम् ।
ध्यात्वा पञ्चमुखं रुद्रं हनूमन्तं दयानिधिम् ॥८॥

खड्गं त्रिशूलं खट्वाङ्गं पाशमंकुशपर्वतम् ।
मुष्टिं कौमोदकीं वृक्षं धारयन्तं कमण्डलुम् ॥९॥

भिन्दिपालंज्ञानमुद्रां दशभिर्मुनिपुङ्गव ? ।
एतान्यायुधजालानि धारयन्तं भयापहम् ॥१०॥

वीरासनोपविष्टं तं सर्वाभरणभूषितम् ।
दिव्यमाल्याम्बरधरं दिव्यगंधानुलेपनम् ॥११॥

सर्वैश्वर्यमयं देवं हनुमद्विश्वतो मुखम् ।
पञ्चास्यमच्युतमनेकविचित्रवर्णं
वक्त्रंशशाङ्कशिखरं कपिराजवर्यम् ।
पीताम्बरादिमुकुटैरुपशोभितांगं
पिङ्गाक्षमाद्यमनिशं मनसा स्मरामि ॥१२॥

मर्कटेशं महोत्साहं सर्वशोकविनाशनम् ।
शत्रुसंहर मां रक्ष श्रीमन्नापदमुद्धर ॥१३॥

ॐ हरि मर्कट मर्कट मन्त्रमिदं परिलिख्यति लिख्यति वामतले।
यदि नश्यति नश्यति शत्रुकुलं यदि मुञ्चति मुञ्चति वामलता।

ॐ हरिमर्कटाय स्वाहा । ॐ नमो भगवते पञ्चवदनाय पूर्वकपिमुखाय सकलशत्रुसंहारकाय स्वाहा ।

ॐ नमो भगवते पञ्चवदनाय दक्षिणमुखाय करालवदनाय नरसिंहाय सकलभूतप्रमथनाय स्वाहा ।

ॐ नमो भगवते पंचवदनाय पश्चिममुखाय गरुडाननाय सकलविषहराय स्वाहा ॥

ॐ नमो भगवते पंचवदनाय उत्तरमुखाय आदिवराहाय सकलसंपत्कराय स्वाहा ॥

ॐ नमो भगवते पंचवदनायोर्ध्वमुखाय हयग्रीवाय सकल जनवश्यकराय स्वाहा ॥

ॐ अस्य श्रीपंचमुखहनुमन्मन्त्रस्य श्रीरामचन्द्र ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः, पंचमुखवीरहनुमान् देवता । हनुमानिति बीजम् । वायुपुत्र इति शक्तिः । अंजनीसुत इति कीलकम् । श्रीरामदूतहनुमत्प्रसादसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः । इति ऋष्यादिकं विन्यसेत् । ॐ अंजनीसुताय अंगुष्ठाभ्यां नमः ॐ रुद्रमूर्तये तर्जनीभ्यां नमः ॐ वायुपुत्राय मध्यमाभ्यां नमः । ॐ अग्निगर्भाय अनामिकाभ्यां नमः ॐ रामदूताय कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ संसीताशोकनिवारणाय करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः । इति करन्यासः ॥

ॐ अंजनीसुताय हृदयाय नमः । ॐ रुद्रमूर्तये शिरसे स्वाहा । ॐ वायुपुत्राय शिखायै वषट् । ॐ अग्निगर्भाय कवचाय हुम् । ॐ रामदूताय नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ पंचमुखहनुमते अस्त्रायफट् ॐ पञ्चमुखहनुमते स्वाहा । इति दिग्बन्धः ।

अथ ध्यानम्—

वन्दे वानरनारसिंहखगराट् क्रोडाश्ववक्त्रान्वितम्
दिव्यालङ्करणं त्रिपंचनयनं देदीप्यमानं रुचा ।
हस्ताब्जै रसिखेटपुस्तकसुधाकुंभाकुशाद्रिं हलम्
खट्वाङ्गं फणिभूरुहं दशभुजं सर्वारिवीरापहम् ।

अथ मन्त्रः—

ॐ श्रीरामदूतायांजनेयाय वायुपुत्राय महाबलपराक्रमाय सीतादुःखनिवारणाय लङ्कादहनकारणाय महाबलप्रचण्डाय फाल्गुन-सखाय कोलाहलसकलब्रह्माण्डविश्वरूपाय सप्तसमुद्रनिर्लङ्घनाय पिङ्गलनयनायामितविक्रमाय सूर्यबिम्बफलसेवनाय दुष्टनिवारणाय दृष्टिनिरालंकृताय संजीविनीसंजीविताङ्गदलक्ष्मणमहाकपिसैन्यप्राण-दाय दशकण्ठविध्वंसनाय रामेष्टाय महाफाल्गुनसखाय सीतासहित रामवरप्रदाय षट्प्रयोगागमपञ्चमुखवीरहनुमन्मन्त्रजपे विनियोगः

ॐ हरिमर्कटमर्कटाय बं बं बं वं बं फट् स्वाहा। ॐ हरि मर्कटमर्कटाय फं फं फं फं फट् स्वाहा। ॐ हरिमर्कटमर्कटाय खं खं खं खं खं (खें खें खें खें खें) मारणाय स्वाहा। ॐ हरि-मर्कटमर्कटाय ठं ठं ठं ठं ठं (लुं लुं लुं लुं लुं) स्तंभनाय सकल-सम्पत्कराय स्वाहा। ॐ हरिमर्कटमर्कटाय धं धं धं धं धं शत्रु-स्तम्भनाय स्वाहाः। ॐ ढं ढं ढं ढं ढं (टं टं टं टं टं) कूर्म मूर्तये पञ्चमुखवीरहनुमते परयन्त्रपरतन्त्रोच्चाटनाय स्वाहा। ॐ कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं वं भं मं यं रं लं वं शं पं सं हं क्षं स्वाहा। इति दिग्बन्धः।

ॐ पूर्वकपिमुखाय पंचमुखहनुमते ठं ठं ठं ठं ठं (टं टं टं टं टं) सकलशत्रुसंहारणाय स्वाहा।

ॐ दक्षिणमुखायपंचमुखहनुमते करालवदनाय नरसिंहाय ॐ ह्रां ह्रां ह्रां ह्रां (ह्रां ह्रीं ह्रुं ह्रैं ह्रौं ह्रः) सकलभूत प्रेतदमनाय स्वाहा।

ॐ पश्चिममुखाय गरुडाननाय पंचमुखहनुमते मं मं मं मं मं सकलविषहराय स्वाहा।

ॐ उत्तर मुखायादिवराहाय लं लं लं लं लं नृसिंहाय नील-कण्ठमूर्त्तये पंचमुखहनुमते स्वाहा।

ॐ ऊर्ध्वमुखाय हयग्रीवाय रुं रुं रुं रुं रुं रुद्रमूर्तवे सकल प्रयोजननिर्वाहकाय स्वाहा ।

ॐ अंजनीसुताय वायुपुत्राय महाबलाय सीताशोकनिवारणाय श्रीरामचन्द्र कृपापादुकाय महावीर्यप्रमथनाय ब्रह्माण्डनाथाय कामदाय पंचमुखवीरहनुमते स्वाहा ।

भूतप्रेतपिशाचब्रह्मराक्षसडाकिनींशाकिन्यन्तरिक्षग्रहपरयन्त्रपरतन्त्रोच्चाटनाय स्वाहा ।

सकलप्रयोजननिर्वाहकाय पंचमुखवीरहनुमते श्रीरामचन्द्रवरप्रसादाय जं जं जं जं जं स्वाहा ।

इदं कवचं पठित्वा तु महाकवचं पठेन्नरः ।
एकवारं जपेत्स्तोत्रं सर्वशत्रुनिवारणम् ॥१॥
द्विवारं तु पठेन्नित्यं पुत्रपौत्रप्रवर्धनम् ।
त्रिवारं च पठेन्नित्यं सर्वसम्पत्करं शुभम् ॥२॥
चतुर्वारं पठेन्नित्यं सर्वरोगनिवारणम् ।
पञ्चवारं पठेन्नित्यं सर्वलोकवशङ्करम् ॥३॥
षट्वारं च पठेन्नित्यं सर्वदेववशंकरम् ।
सप्तवारं पठेन्नित्यं सर्वसौभाग्यदायकम् ॥४॥
अष्टवारं पठेन्नित्यंमिष्टकामार्थसिद्धिदम् ।
नववारं पठेन्नित्यं राजभोगमवाप्नुयात् ॥५॥
दशवारं पठेन्नित्यं त्रैलोक्यज्ञानदर्शनम् ।
रुद्रावृत्ति पठेन्नित्यं सर्वसिद्धिर्भवेद् ध्रुवम् ॥६॥
निर्बलो रोगयुक्तश्च महाव्याधादि पीडितः ।
कवचं स्मरणे नैव महाबलमवाप्नुयात् ॥७॥

इति श्री सुदर्शनसंहितायां
श्रीरामचन्द्रसीताप्रोक्तं श्रीपंचमुखहनुमत्कवचं सम्पूर्णम्

* वीरविंशतिकाख्यं श्रीमद्धनुमत्स्तोत्रम् *

लांगूलमृष्टवियदम्बुधिमध्यमार्ग
मुत्प्लुत्य यान्तममरेन्द्रमुदो निदानम् ।
आस्फालितस्वकभुजस्फुटिताद्रिकाण्डं
द्राङ्मैथिलीनयननन्दनमद्य वन्दे ॥१॥

मध्ये निशाचरमहाभयदुर्विषह्यं
घोराद्भुतव्रतमियं यदधश्चचार ।
पत्ये तदस्य बहुधापरिणामदूतं
सीतापुरस्कृततनुं हनुमन्तमीडे ॥२॥

यः पादपङ्कजयुगं रघुनाथपत्न्या
नैराश्यरूपितविरक्तमपि स्वरागैः ।
प्रागेव रागि विदधे बहु वन्दमानो
वन्देऽञ्जनाजनुषमेव विशेषतुष्ट्यै ॥३॥

योऽजानकीविरहवेदनहेतुभूतान्
द्रागाकलय्य सदशोकवनीयवृक्षान् ।
लङ्कालकानिव घनानुदपाटयद्य-
स्तं हेमसुन्दरकपिं प्रणमामि पुष्ट्यै ॥४॥

घोषप्रतिध्वनितशैलगुहासहस्र
सम्भ्रान्तनादितचलन्मृगनाथयूथम् ।
अक्षक्षयक्षणविलक्षितराक्षसेन्द्र-
मिन्द्रं कपीन्द्रपृतनावलयस्य वन्दे ॥५॥

हेला विलङ्घितमहार्णवमप्यमन्दं
घूर्णद्गदाविहतिविक्षतराक्षसेषु ।
स्वम्भोदवारिधिमपारमिवेक्षमाणं
वन्देऽहमक्षयकुमारकमारकेशम् ॥६॥

जम्भारिजित्प्रसभलम्भितपाशबन्धं
　　ब्रह्मानुरोधमिव तत्क्षणमुद्वहन्तम् ।
रौद्रावतारमपि रावणदीर्घदृष्टि-
　　संकोचकारणमुदारहरिं भजामि ॥७॥

दर्पोन्नमन्निशिचरेश्वरमूर्धचञ्च-
　　त्कोटीरचुम्बि निजबिम्बमुदीक्ष्य हृष्टम् ।
पश्यन्तमात्मभुजयन्त्रणपिष्यमाण-
　　तत्कायशोणितनिपातमपेक्षिवक्षः ॥८॥

अक्षप्रभृत्यमरविक्रमवीरनाश-
　　क्रोधादिव द्रुतमुदञ्चितचन्द्रहासाम् ।
निन्द्रापिताभ्रघनगर्जनघोरघोषैः
　　संस्तम्भयन्तमभिनौमि दशास्य भूर्तिम् ॥९॥

आशंस्यमानविजयं रघुनाथधाम
　　संसन्तमात्मकृतभूरिपराक्रमेण ।
दौत्ये समागमसमन्वयमादिशन्तं
　　वन्दे हरेः क्षितिभृतः पृतनाप्रधानम् ॥१०॥

यस्यौचितीं समुपदिष्टवतोऽधिपुच्छं
　　दम्भान्धितां धियमपेक्ष्य विवर्धमानः ।
नक्तञ्चराधिपतिरोपहिरण्यरेता
　　लङ्कां दिधक्षुरपतत्तमहं वृणोमि ॥११॥

क्रन्दन्निशाचरकुलां ज्वलनावलीढैः
　　साक्षाद्गृहैरिव बहिः परिदेवमानाम् ।
स्तब्धस्वपुच्छतटलग्नकृपीटयोनि-
　　दन्दह्यमाननगरीं परिगाहमानाम् ॥१२॥

मूर्तैर्गुहासुभिरिव द्युपुरं व्रजद्भि-
　　र्व्योम्नि क्षणं परिगतं पतगैर्ज्वलद्भिः ।

पीताम्बरं दधतमुच्छ्रितदीप्तिपुच्छं
सेनां वहद्विहगराजमिवाहमीडे ॥१३॥

स्तम्भीभवत्स्वगुरुबालधिलग्नवह्नि-
ज्वालोल्लसद्ध्वजपटामिव देवतुष्ट्यै ।
वन्दे यथोपरि पुरो दिवि दर्शयन्त-
मद्यैव रामविजयाजिकवैजयन्तीम् ॥१४॥

रक्षश्चयैकचितकक्षकपूश्चितो यः
सीताशुचो निजविलोकनतो मृतायाः ।
दाहं व्यधादिव तदन्यविधेयभूतं
लाङ्गूलदत्तदहनेन मुदे सनोऽस्तु ॥१५॥

आशुद्धये रघुपतिप्रणयैकसाक्ष्ये
वैदेहराजदुहितुः सरिदीश्वराय ।
न्यासं ददानमिव पावकमापतन्त-
मब्धौ प्रभञ्जनतनूजनुषं भजामि ॥१६॥

रक्षस्वतृप्तिरुडशान्तिविशेषशोण-
मक्षक्षयक्षणविधानुमितात्मदाक्ष्यम् ।
भास्वत्प्रभातरविभानुभरावभासं
लङ्काभयङ्करममुं भगवन्तमीडे ॥१७॥

तीर्त्वोदधिं जनकजार्पितमाप्य चूडा-
रत्नं रिपोरपिपुरं परमस्य दग्ध्वा ।
श्रीरामहर्षगलदश्रभिषिच्यमानं
तं ब्रह्मचारिवरवानरमाश्रयेऽहम् ॥१८॥

यः प्राणवायुजनितो गिरिशस्य शान्तः
शिष्योऽपि गौतमगुरुर्मुनिशङ्करात्मा ।
हृद्यो हरस्य हरिवद्धरितां गतोऽपि
धी धैर्यशास्त्रविभवेऽतुलमाश्रये तम् ॥ १९॥

स्कन्धेऽधिवाह्यजगदुत्तरगीतिरीत्या
यः पार्वतीश्वरमतोपयदाशुतोषम् ।
तस्मादवाप च वरानपरानवाप्यान्
तं वानरं परमवैष्णवमीशमीडे ॥२०॥

उमापतेः कविपतेः स्तुतिर्बाल्याविजृम्भिता ।
हनुमतस्तुष्टयेऽस्तु वीरविंशतिकाभिधा ॥

इति श्री कविपत्युपनामकोमापतिशर्मद्विवेदिविरचितं
वीरविंशतिकाख्यं श्रीमद्धनुमत्स्तोत्रं सम्पूर्णम्

* संकष्टमोचनस्तोत्रम् *

सिन्दूरपूररुचिरो बलवीर्यसिन्धु-
र्बुद्धिप्रवाहनिधिरद्भुतवैभवश्रीः ।
दीनार्तिदावदहनो वरदोवरेण्यः
संकष्टमोचनविभुस्तनुतां शुभं नः ॥१॥

सोत्साहलङ्घितमहार्णवपौरुषश्री-
र्लङ्कापुरीप्रदहनप्रथितप्रभावः ।
घोराहवप्रमथितारिचमूप्रवीरः
प्राभञ्जनिर्जयति मर्कटसार्वभौमः ॥२॥

द्रोणाचलानयनवर्णितभव्यमूर्तिः
श्रीरामलक्ष्मणसहायकचक्रवर्ती ।
काशीस्थदक्षिणविराजितसौधमल्लः
श्रीमारुतिर्विजयते भगवान् महेशः ॥३॥

नूनं स्मृतोऽपि दयते भजतां कपीन्द्रः
सम्पूजितो दिशति वाञ्छितसिद्धिवृद्धिम् ।
सम्मोदकप्रिय उपैति परं प्रहर्षं
रामायणश्रवणतः पठतां शरण्यः ॥४॥

श्रीभारतप्रवरयुद्धरथोद्धतश्रीः
पार्थैककेतनकरालविशालमूर्तिः ।
उच्चैर्घनाघनघटाविकटाट्टहासः
श्रीकृष्णपक्षभरणः शरणं ममास्तु ॥५॥

जङ्घालजङ्घ उपमातिविदूरवेगो
मुष्टिप्रहारपरिमूर्च्छितराक्षसेन्द्रः ।
श्रीरामकीर्तनपराक्रमणोद्धवश्रीः
प्राकम्पनिर्विभुरुदञ्चतु भूतये नः ॥६॥

सीतार्तिदारुणपटुः प्रबलप्रतापी
श्रीराघवेन्द्रपरिरम्भवरप्रसादः ।
वर्णीश्वरः सविधिशिक्षितकालनेमिः
पञ्चाननोऽपनयतां विपदोऽधिदेशम् ॥७॥

उद्यद्भानुसहस्रसंनिभतनुः पीताम्बरालंकृतः
प्रोज्ज्वालानलदीप्यमाननयनोनिष्पिष्टरक्षोगणः ।
संवर्तोद्यतवारिदोद्धतरवः प्रोच्चैर्गदाविभ्रमः
श्रीमान् मारुतनन्दनः प्रतिदिनं ध्येयो विपद्भञ्जनः ॥८

रक्षः पिशाचभयनाशनमामयाधि–
प्रोच्चैर्ज्वरापहरणं दमनं रिपूणाम् ।
सम्पत्तिपुत्रकरणं विजयप्रदानं
संकष्टमोचनविभोः स्तवनं नराणाम् ॥९॥

दारिद्र्यदुःखदहनं विजयं विवादे
कल्याणसाधनममङ्गलवारणञ्च ।
दाम्पत्यदीर्घसुखसर्वमनोरथाप्तिं
श्रीमारुतेः स्तवशतावृतिरातनोति ॥१०॥

स्तोत्रं य एतदनुवासरमस्तकामः
श्रीमारुतिं समनुचिन्त्य पठेत्सुधीरः ।

तस्मै प्रसादसुमुखो वरवानरेन्द्रः
साक्षात्कृतो भवति शाश्वतिकः सहायः ॥११॥
संकष्टमोचनस्तोत्रं शंकराचार्यभिक्षुणा ।
महेश्वरेण रचितं मारुतेश्चरणेऽर्पितम् ॥१२॥

* श्रीहनुमत्स्तोत्रम् *

उद्दामशक्तिनिलयं समरेऽसुराणां
साक्षात्कृतान्तमवलिप्तवधेऽपि दक्षम् ।
अक्षान्तकं सततमुज्झितशौर्यदर्पं
सौमित्रिरक्षचरणं हनुमन्तमीडे ॥१॥
श्रीमैथिलीप्रणयबन्धनबद्धराम–
पादारविन्दमकरन्दमिलन्मिलिन्दम् ।
सर्वार्थसिद्धिजननक्षमभक्तिकल्प
वल्ल्या नमामि धृतजीवनमालवालम् ॥२॥
इष्टं प्रपूरयति कष्टमपाकरोति
दुष्टं दलत्युपकरोति च साधुवृन्दम् ।
अर्थं दुरापमपि यो वितरत्यजस्रं
पूज्योऽपि पूजयति राघवपादपद्मम् ॥३॥
भक्तापदां सपदि शोषयिता कृशानुः
भानुः सतां हृदयपद्मविकासहेतुः ।
सेतुर्भवाब्धितरणस्य जयस्य केतुः
भक्तप्रियो जयति निर्जितकल्पवृक्षः ॥४॥
सर्वोऽपि शाम्यति दुरन्त उपद्रवस्य
वेगः स्तवं तव हृदा जपतां जनानाम् ।
श्रेयांसि दुर्लभतमानि परिस्फुरन्ति
नान्तर्भवन्ति भुवनेषु च तद्यशांसि ॥५॥

(पं० श्री रतिनाथझा)

❀

* जगद्गुरुश्रीरामानन्दाचार्यरघुवराचार्यानुगृहीताः *

जायामा मैथिलीतः स्मितशुचिवदनोहासभासोभिरामः
श्यामः सीतासखीनां हृदिरतिसुकरः कासते यश्चकामः ।
वामः श्रौतारिशिष्टा दशमुखवदनोहामशोभाभिरामः
श्रीरामः शंतनोतु श्रुतिरतिमुनिभिर्मन्यते मानकामः ॥१॥

औद्धत्याधूतधर्मश्रुतिरतिरहितक्रूरकर्मप्रहारी
हारी कामारिवेधो मुनिजनमनसां जानकीहृद्विहारी ।
वारिक्लेशाग्निकाण्डे रघुकुलतिलकः कीर्त्यतेयोऽसुरारि
र्धारीमुक्तिप्रसादं शुभमिह तनुतां मारुतीशः खरारिः ॥२॥

प्रथितभानुकुलाम्बुजभास्करं जनकजाहृदयैकविभूषणम् ।
शिवविरिञ्चिनुतांघ्रिसरोरुहं रघुपतिं सततं प्रणमाम्यहम् ॥३॥

सव्यांके च विभाति भूतलसुता धृत्वा करे पङ्कजं
ग्रीवायांस्थलपद्मनिर्मितमहाहारं दधाना सती ।
पादाग्रे नतमस्तकः कपिवरः पार्श्वेस्थितो लक्ष्मणो
यस्यायं स रघूत्तमः श्रुतिनुतः पायात्सदास्वाश्रितान् ॥४॥

यज्ञानामवरोधतः श्रुतिपथप्रध्वंसनात्तत्क्षणे
पापाचारचणैरियं खलगणैर्व्याप्ताक्षितिर्दुःखिता ।
दुःखाघेनविमोचिता गुरुरसौप्राचार्यवर्योमहान्
रामानन्दयतिर्जगत्त्रयगुरुर्वोऽव्यात्सुरेन्द्रार्चितः ॥५॥

अज्ञानाम्बुधिमग्नमानवकृते वेदान्तसूत्रे व्यधान्
मायिध्वान्तनिराकरिष्णुविशदस्वानन्दभाष्यं शुभम् ।
येनार्येण कृतंसमोपनिषदि प्रेम्णा च भाष्यं बृहद्
रामानन्दयतिर्जगत्त्रयगुरुर्वोऽव्यात्सुरेन्द्रार्चितः ॥६॥

जैनारण्यगजेन्द्रदारणपटुः कण्ठीरवो भीषणो
बौद्धानां वलहारको द्विजगणानान्धर्मसंयोजकः ।
गीताभाष्यकृदेषदैशिकपतिर्योगीन्द्रचूडामणी
रामानन्दयतिर्जगत्त्रयगुरुर्वोऽव्यात्सुरेन्द्रार्चितः ॥७

यं ब्रह्मेति गदन्ति वेदनिपुणा वेदान्तिनः सर्वदा
सांख्यज्ञैः पुरुषस्तथाक्षचरणैः कर्तेतियो गीयते ।
भाट्टैः कर्म च काव्यकोविदचयैर्मुख्योरसः कीर्तितो
विश्वस्मिन्सुजनान्स एव भगवान्पायाद्रवूगां पतिः ॥८